ॐ

# *वीर-पंच-रत्न

अर्थात्

## आदर्श जैन कुमार


लेखक

दमोह-निवासी

पं० मूलचन्द्र जैन "वत्सल" अध्यापक


-:o:-


प्रकाशक

साहित्य रत्नालय, बिजनौर

शान्तिचन्द्र जैन के प्रबन्ध से

"चैतन्य प्रिन्टिङ्ग प्रेस" बिजनौर में छपी।

प्रथम बार प्रति २००० } ज्येष्ठ २४५४ { मूल्य ।=)
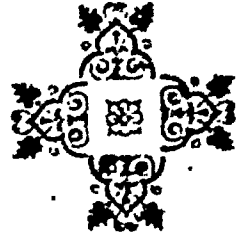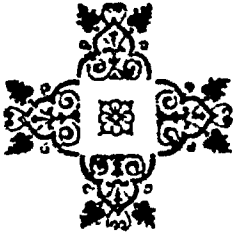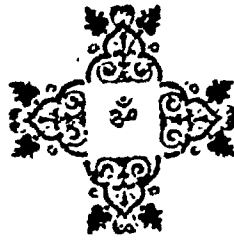
आ ! लेखनी सोते हुये वीरों को जगादे,<br>
कर्तव्य की दिलों में प्रबल लाग लगादे ।<br>
आलस्य, औ कायर पने को शीघ्र भगादे,<br>
जो छिप रही है वीरता तू उसमें पगादे ।<br>
दे, आके हटा, स्वार्थ वासना का जाल तू;<br>
दे वीर औ धर्मी बना भारत के लाल तू ॥

ॐ
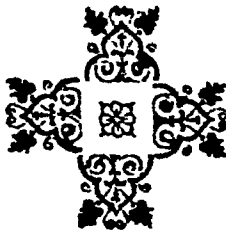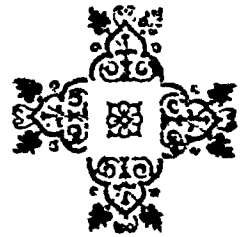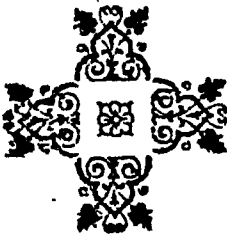
प्रियवर ____________________

के कर कमलों में

सस्नेह समर्पित।

स्नेहाकांक्षी—

कैसे थे धर्मधीर, कर्मवीर वह कुमार:
कैसा था तेज, त्याग और जाति धर्म प्यार।
पढ़ करके इसे देखलो, प्रिय आप एक बार,
है भर रहा इस में वही वीरत्व का भण्डार।
बन जाओ वीर, वीर बालकों को बनादो:
पढ़ जाओ कर्म पाठ औ मित्रों को सुनादो॥

# भूमिका

—:)॥(:—

यह निर्विवाद रूप से सिद्ध है, कि किसी भी धर्म अथवा जाति का उत्थान समाज के भविष्य विधाता बालकों की उन्नति पर ही निर्भर है। वे बालक जिन्हें हम आज अबोध और निर्बल समझ रहे हैं, भविष्य में समाज और राष्ट्र उत्थान के विधाता होते हैं। अस्तु, उनमें बाल्यावस्था से ही वीरत्व तथा धार्मिकता के भाव उत्पन्न करना सर्व प्रथम आवश्यक है।

बालकों के हृदय में जो धार्मिक तथा समाजोत्थान की प्रबल भावनाएं बाल्यावस्था से जागृत होती हैं, वही युवावस्था में विकास को प्राप्त होकर आयु पर्यंत स्थायी रहती हैं। अतः यह उचित है कि बाल्यावस्था से ही उनके हृदयों में स्वार्थत्याग की भावनाएं जागृत की जाएं, किन्तु खेद है कि वर्तमान के कुमारों में धार्मिकता तथा पूर्व गौरव रक्षा के भाव भरने का माता पिता और समाज के द्वारा पूर्ण प्रयत्न नहीं किया जाता। यही कारण

है कि वह अपने धार्मिक आख्यानों तथा पूर्व आदर्श पुरुषों की कथाओं को कपोल कल्पित और मन गढ़ंत समझते हुए धार्मिकता के नाम से कोसों दूर भागते हैं। उन्हें अपने धर्म तथा पूर्व गौरव पर किंचित् भी विश्वास नहीं होता; और जहां धर्म के ऊपर मर मिटने के लिए उन्हें तैयार रहना चाहिये था, वहाँ धर्म का अस्तित्व मिटाने के लिये कटिवद्ध हो जाते हैं। जहां धर्म उत्थान के लिये उन्हें सर्वस्व न्योछावर करने को तैयार होना चाहिये था वहाँ किंचित स्वार्थ पूर्ति, विलास वासना और क्षणिक वैभव के पीछे अपने धर्म को भी बेचने से नहीं हिचकिचाते। इसका केवल मात्र कारण यही है कि उनकी उचित शिक्षा तथा सदाचरण पर किंचित् भी ध्यान नहीं देकर केवल विदेशी साहित्य के रट्टू बना कर उन्हें हम स्वयं विलासी, कायर, डरपोक और धर्म शून्य बनाने के साधन बनते हैं।

पूर्व कालीन जैन इतिहास का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि पूर्व समय के वीर कुमारों के हृदय वीरता, धार्मिकता और प्रणपूर्ति के दृढ़ भावों से भरे हुये थे। उनके शरीर में अद्भुत तेज और पराक्रम का झरना बहता था, वह अपने धर्म के ऊपर हँसते २ प्राण न्योछावर करने में तनिक भी नहीं हिचकिचाते थे और संसार से अन्याय तथा अत्याचार को नष्ट करने तथा

धर्म का उत्थान करने के लिये अपने प्राणों तक को न्योछावर कर देते थे।

जैन साहित्य ऐसे सहस्रों वीर कुमारों और आदर्श त्यागियों के पवित्र चरित्रों से भरा हुआ है; किंतु वह इतना वृहत् है कि उसका अवलोकन प्रत्येक व्यक्ति के लिये सरल नहीं है। अस्तु आवश्यकता है कि समयोपयोगी वीर साहित्य की रचना की जाय जिससे जैन जाति के कुमार उसका अध्ययन कर पुनः वीरत्व की वृद्धि करें।

हिन्दी साहित्य में इस प्रकार के साहित्य की कमी नहीं है, किंतु जैन समाज में ऐसे समयोपयोगी साहित्य का अभावसा ही है। अस्तु उसके कुछ अभाव की पूर्ति करने के लिये ही इस पुस्तिका की रचना की गई है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि जैन जाति के भविष्य में होने वाले मूल स्थंभ बालकगण तथा अन्य धर्म प्रेमी सज्जन इसका अवश्य पठन करेंगे और अपने पूर्व धर्म वीरों के आदर्श का अनुकरण करेंगे। यदि पाठकों के हृदयों में इसके द्वारा कुछ भी धार्मिकता तथा वीरत्व के भाव उत्पन्न होसकें तो मैं अपने इस प्रयत्न को सार्थक समझूँगा और शीघ्र ही कोई अन्य भेंट लेकर उपस्थित होऊंगा।

अल्पज्ञता अथवा प्रमाद के कारण यदि इस रचना में कविता संबंधी कुछ त्रुटियें रह गई हों तो विद्वत् समाज से प्रार्थना है कि वह उन्हें मुझे विदित करने की कृपा करें जिससे दूसरे संस्करण में उन्हें ठीक कर दिया जावे।

| | |
|---|---|
| बिजनौर | समाज सेवक |
| ज्येष्ठ पूर्णिमा वीराब्द २४५४ | मूलचन्द्र जैन "वत्सल" |

॥ ॐ ॥
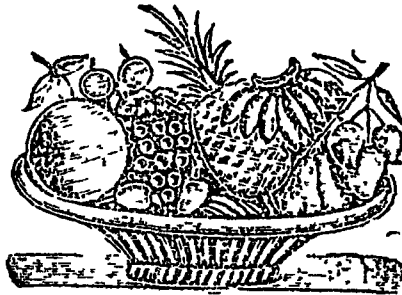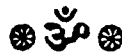
# वीर-पंच-रत्न

## १, प्रण वीर लव, कुश कुमार

—:(o)≡(o):—

श्री वीर, महावीर का करता हूं मैं बंदन,
दाता हैं अतुल बल के अमंगल के निकंदन।
दीजे मुझे बरदान, ऐ सिद्धार्थ के नंदन,
वीरों का चरित यह मेरा बन जाए ज्यों कुंदन॥
सोते हुये दिलों में यह साहस को जगादे,
आलस का कटक काट वीरता को बढ़ादे ॥१॥
जग जाएं जोश से सभी कायर पड़े हैं जो,
लग जाएं कर्म–पंथ में सैनिक खड़े हैं जो।
पग जायें वीरता में हटा दिल से बुज़दिली,
भगजाएं विघ्न, सामने आकर अड़े हैं जो॥

दिखलादें वही शान जो वीरों में भरी थी,
रणधीरता, प्रण वीरता जो उनमें खरी थी ॥२॥
दुःखों के साम्हने नहीं साहस को घटाया,
सुक्खों के साम्हने नहीं लालच को बढ़ाया।
लाखों विपत्तियों से नहीं दिल को था तोड़ा,
यमराज के भी साम्हने मुंह को नहीं मोड़ा ॥
निज कर्म के आगे न किया जान का ख़याल,
रक्खा अगर जो कुछ तो रखा शानका ख़याल॥३॥
आओ! तुम्हें सुनाएं, उन वीरोंका चरित आज,
भारत के सपूतों की वीरता की झलक आज।
दिखलादें पूर्वजों की शूरता की वो झांकी,
बतलादें करामात तुम्हें युद्ध कला की ॥
जिससे फड़क उठे बदन हर एक का अभी,
भरजाय अंग २ में प्रण वीरता अभी ॥४॥
था पुंडरीकपुर विशाल और अति महान,
राजा थे वज्रजंघ धर्मभक्त गुण निधान।

रमणीक मनोहारि था मोहक महा उद्यान,
था उसके साम्हने मनोज्ञ इन्द्र गृह समान ॥
अतिशय उत्तंग राज महल था प्रभा निकेत,
रहती थीं जानकी जी वहाँ पुत्र युग समेत ॥५॥
था उस समय प्रशान्त सरल उनका पूर्ण मन,
वह कर रहीं थी कर्म प्रकृति का अहोचिंतन ।
थीं उठ रहीं मानस में विविध बोधमय तरंग,
वह नाच रहा सामने था पूर्व सुख प्रसंग ॥
बैठी थी इस प्रकार वीर पुत्र युगल युक्त,
मन उसका हुआ पुत्र प्रेम में अहो अनुरक्त ॥६॥
युग पुत्र थे अनंग लवण औ मदन अंकुश,
बैठे समीप थे अहो वह मातृ प्रेम वश ।
लव, कुश थे युगल पुत्र कर्मवीर औ प्रणवीर,
साहस अदम्य था भरा थे और प्रबल वीर ॥
थे मातृभक्त, धर्म भक्त और विनय युक्त,
विद्या, कला संपन्न न्याय नीति से संयुक्त ॥७॥

उसही समय नारद जी थे आकाश से आए,
श्री जानकी समीप हर्ष युक्त सिधाये।
आते हुए देखा सिया ने उनको उस समय,
अति नम्रता संयुक्त उठी और विनय मय ॥
कहने लगी करती हूं महाराज मैं प्रणाम,
हे देव! आइए, पधारिये विनोद धाम ॥८॥
युग पुत्र भी तत्काल उठे और विनय धार,
अत्यन्त नम्र भाव सहित करके नमस्कार।
अतिशय विनोद युक्त गये बैठ वह समीप,
थे प्रज्वलित हुये मनो सम्मुख दो रत्नदीप।
अत्यंत तेज और प्रभा युक्त, युगल पुत्र,
अवलोक हृदय मध्य जगा प्रेम अति पवित्र ॥९॥
श्री रामजी के हैं ये युगल पुत्र करके याद,
अति मिष्ट वचन युक्त दिया उनको आशिर्वाद।
हे पुत्र! चिरंजीव रहो! तेज, बल निधान,
साम्राज्य तुम्हारे हो राम लक्ष्मण समान ॥

हो विश्वमध्य राज तुम्हारा अहो विशाल,
रघुवंशकी फहराओ पताका भुवनमें लाल ॥१०॥

रह करके कुछ समय को युगल वीर पुत्र मौन,
कहने लगे, कहिए हैं राम लक्ष्मण जी कौन?
कैसे पराक्रमी हैं, और कैसे तेजवान्,
विख्यात हुये विश्व में वह किस तरह महान ॥
साम्राज्य विश्व में है अहो उनका क्यों ऐसा,
आशीर्वाद आपने हम को दिया कैसा ॥११॥

कहने लगे नारद जी, वीर वर श्रवण करो,
कहता चरित्र उनका हूं उसको हृदय धरो।
हैं कौशला नगरी के रामचन्द्र जी नृपति,
उनकेअनुज लक्ष्मणजी हैं धारक विमल सुमति ॥
हैं चक्र रत्न ईश वह बलभद्र नारायण,
विजयी हैं तीन खंड के सेवक हैं नृपति गण ॥१२॥

युग इन्द्र सदृश उनका है वैभव अकथ अनंत,
कहता हूं उनका मैं, सुनो कुछ पूर्व का वृतान्त।

मिथुला नरेश वीर थे दशरथ जी गुण निधान,
प्रिय चार पुत्र उनके थे दिक्पाल के समान ॥
श्री राम प्रथम, लक्ष्मण द्वितीय वीर थे,
एवं भरत शत्रुघ्न प्रबल वीरधीर थे ॥१३॥
राजा जनक की प्रेममई सुन्दरी सिया,
श्री रामचन्द्र जी की थी मन मोहनी प्रिया।
दशरथ जी हुये थे अहो संसार से विरक्त,
लघु पुत्र भरत जी भी थे वैराग्य में अनुरक्त ॥
अतएव नृपति ने श्री रघुराज को सुखकार,
तत्काल राज्य देनेका मनमें किया विचार ॥१४॥
थी माता भरत की श्री केकई जी सुगुणखानि,
उसको श्री दशरथ ने दिये थे अहो वरदान।
अत्यंत प्रचुर उसके हृदय मध्य हुआ शोक,
वैराग्य के सम्मुख अहो निज पुत्र को विलोक ॥
अतएव नम्रता समेत भक्ति युत महान,
भूपाल से उसने यही माँगा अहो वरदान ॥१५॥

दो राज्य भरत को तथा श्री राम को बनवास,
की पूर्ण वचन पूर्ति नृपति ने हृदय उल्लास ॥
श्री राम ज़ी ने हुक्म पिता का किया स्वीकार,
वनवास के ज़ाने को हुये शीघ्रतः तैयार ॥
श्री जानकी भी साथ गई थी, हृदय उमंग,
औ भ्रातृ भक्त लक्ष्मण जी भी गये थे संग ॥१६॥

लंकेश था रावण सकल विद्याधरों का ईश,
वल, शक्ति युक्त था असंख्य सैन्यका अधीश ।
भारत के भूपगण समस्त उस के थे अधीन,
विक्रम, प्रताप उसका था संसार में अक्षीण ॥
होकर विनम्र देव भी मस्तक थे झुकाते,
वलवीर, शूरवीर हुक्म सब ही वजाते ॥१७॥

छल, वल तथा कौशल से गया जानकी ले हर,
एवं उसे लंका में रखा पूर्ण यत्न कर ।
करके अनेक यत्न उसे चाहा डिगाना,
लालच, प्रलोभनों में उसे चाहा फँसाना ॥

बल, शक्ति, रूप का दिखाया लोभ था अमित,
प्रण अपनेसे किंचित् न हुई जानकी चलित ॥१८॥
श्री राम जी सीता के प्रेम मध्य थे अनुरक्त,
उस के वियोग में हुये अत्यंत वह संतप्त।
हनुमान वीर ने पता सीता का लगाया,
श्री राम जी ने उस से विकट युद्ध मचाया॥
कर नष्ट, प्राप्त था किया अति दिव्य चक्ररत्न,
श्री जानकी जी को छुटा लाये थे करप्रयत्न ॥१६॥
था प्राप्त किया अद्वितीय विश्व में सम्राज्य,
एवं पुनः पाया अहो! कौशल का दिव्य राज्य।
यद्यपि थी जानकी जी विमल शील रत्न कोष,
नगरी निवासियों ने लगाया था किंतु दोष॥
रावण के सदन मध्य थी चिरकाल तक रही,
है रख लिया श्री राम जी ने, दोष था यही ॥२०॥
श्री रामजी थे न्याय शील और प्रजा भक्त,
एवं थे जानकी के विमल प्रेम में अनुरक्त।

यद्यपि था ज्ञात यह उन्हें हैं जानकी निर्दोष,
उपरोक्त प्रजागण हैं लगाते यह व्यर्थ दोष ॥
लोकापवाद का था किन्तु उन को भय बड़ा,
अतएव यह विचार किया कर हृदय कड़ा ॥२१॥
श्री जानकी का दिव्य प्रेम, मोह तथा त्याग,
रक्षा स्वमान हेतु उन्हें दें अहो परि त्याग।
निर्दोष जानकी का अतः त्याग कर दिया,
अबला अनाथिनी का हा! परित्याग कर दिया ॥
श्री जानकी वन मध्य रही सहती हुई ग़म,
पश्चात् युगल कर्म वीर पुत्र हुए तुम ॥२२॥
प्रिय पुत्र ज्ञात होगया, हैं राम लखन कौन,
नारद जी कह के इतना हुये एक दम ही मौन।
निज मात के अपमान का उन को हुआ तब बोध,
वह सह न सके और हृदय मध्य जगा क्रोध ॥
कहने लगे श्री राम से हम युद्ध करेंगे,
निज मातृ का अपमान शीघ्र नष्ट करेंगे ॥२३॥

कितने पराक्रमी हैं श्री राम चन्द्र जी,
देखेंगे शक्ति, युद्ध कला आज हम सभी।
लोकापवाद भय से दिया मात को निकाल,
इस कार्य का बदला अवश्य लेंगे हम निकाल॥
निज मातृ के ऋण से सशीघ्र होंगे हम उऋण,
घनघोर युद्ध आज करेंगे ये किया प्रण॥२४॥
कर देंगे शीघ्रतः प्रताप उन का अटल चूर,
देखेंगे शीघ्रतः अहो कैसे हैं? प्रबल शूर।
जब तक नहीं निज मात का बदला चुकायेंगे,
हरगिज़ नहीं माता को स्वमुख हम दिखायेंगे॥
युद्धाग्नि ज्वलित कर श्री नारद प्रसन्न मन—
होकर, सशीघ्र चल दिये ठहरे न एक क्षण॥२५॥
युद्धार्थ राम चन्द्र जी से पुत्र का यह प्रण,
श्री जानकी जी ने किया जब उस समय श्रवण।
भय, खेद तथा हर्ष युक्त उस ने कहा यह,
हे वीर पुत्र! तुम ने दिया इस समय क्या कह॥
श्री राम लक्ष्मण जी हैं विख्यात प्रबल वीर,
बल, शक्ति, पराक्रम में हैं वह अद्वितीय वीर॥२६॥

हे पुत्र ! प्रबल, बल अजेय शक्ति युक्त तुम,
रण में नहीं लड़ने में किसी वीर से हो कम।
तुम में भरा अनंत पराक्रम है, अहो ! वीर,
मैं जानती हूं तुम हो कुशल, धीर औ प्रण वीर ॥
है किन्तु नहीं राम जी से लड़ना उचित पुत्र,
वह हैं तुम्हारे पूज्य तथा श्रेष्ठ औ पवित्र ॥२७॥
यदि पाओगे विजय सुपुत्र तो भी मेरी हार,
रण में निहत यदि वह हुये जीना मेरा धिक्कार।
औ तुम हुये रण क्षेत्र में हे पुत्र ! यदि विजित,
युग पुत्र में से होगया यदि कोई भी निहत ॥
तो कैसे सहूंगी मैं हाय तीव्र पुत्र शोक,
हे वीर ! इस लिये रही हूं रण से तुम्हें रोक ॥२८॥
अत्यंत मधुर शब्द श्रवण कर के युगल वीर,
कहने लगे हे मातु श्री ! रक्खो हृदय में धीर।
हैं आप के सुत, होंगे नहीं रण में पराजित,
हम आपकी कृपा से मातु होंगे विश्वजित् ॥
हैं पूज्य, बंधुवर्ग तथा श्रेष्ठ गुरू गण,
हे मात ध्यान युक्त किंतु कीजिए श्रवण ॥२६॥

जो प्रण है किया, हम अवश्य पूर्ण करेंगे,
प्रिय मात के अपमान को हम चूर्ण करेंगे।
कहते हैं आप से हे मात! किंतु एक बात,
श्री राम, लक्ष्मण जी पर न हम करेंगे घात ॥
रण क्षेत्र में जाने की आज्ञा शीघ्र दीजिये,
हे मात! विमल प्रेम से आशीष दीजिये ॥२०॥
श्री जानकी ने धैर्य युक्त यह किया श्रवण,
एवं युगल सुतों का लखा पूर्ण सुदृढ़ प्रण।
कहने लगी हे वीर पुत्र! वीर की संतान,
जाओ ऐ वीर रण में, रखो वीरता का मान ॥
पर रण में विजित होके नहीं लौट के आना,
मत दाग़ मेरी कुक्ष को हे पुत्र! लगाना ॥२१॥
कर आज्ञा श्रवण मातु की हर्षित हुये हृदय,
सजने लगे युद्धार्थ सकल सैन्य शस्त्र मय।
भूपाल पुंडरीक को यह हाल हुआ ज्ञात,
हर्षित हुआ करके श्रवण प्रणवीरता की बात ॥
अपनी समस्त सैन्य को यह हुक्म दिया तब,
जाओ कुमार साथ युद्ध को ऐ वीर सब ॥२२॥

सत्वर सहर्ष शस्त्र सहित सज गये सैनिक,
अवलोक युगल वीर मन हर्षित हुये अधिक।
लेकर समस्त सैन्य, विकट नाद सुनाते,
योद्धा गणों के नाद से ब्रह्मांड हिलाते॥
नृप गण को जीत कर उन्हें निज दास बनाते,
जाते हुए पथ मध्य विजय ध्वनि को बजाते॥३३॥
सत्वर पहुंच गये अहो मिथिलापुरी निकट,
क्षोभित हुये कर शोर श्रवण प्रजागण विकट।
कहने लगे हैं कौन ? महाबाहु विश्वजित,
जिसका हृदय न राम के भय से हुआ शंकित॥
है कौन ? प्रबल शक्ति उपासक अहो यह वीर,
निःशंक आ रहा है सैन्य युक्त युद्ध वीर॥३४॥
भय युक्त प्रजागण समीप राम के आए,
मिथुलेश को तत्काल ही संवाद सुनाए।
श्री राम जी ने शीघ्र कुशल दूत बुलाया,
एवं उसे विवेक मय यह हुक्म सुनाया॥
सुन लो ऐ वीर दूत, वहां शीघ्रतः जाओ,
है कौन प्रबल वीर ? सकल हाल सुनाओ॥३५॥

तत्काल गया दूत युगल वीर पुत्र पास,
कहने लगा प्रवीण मधुर शब्द गुण विकास ।
हैं कौन आप ? और यहां आये किस लिये,
क्या हेतु आप का है, वीर वर सभी कहिये ॥
मधु युक्त मधुर शब्द श्रवण करके प्रिय कुमार,
कहने लगे समोद उचित वाक्य सुगुण धार ॥२६॥
हम ने सुना है राम, लक्ष्मण जी हैं प्रबल वीर,
दृढ़, शक्ति, तेज, और पराक्रम सहित हैं धीर ।
ब्रह्माण्ड में उन के समान कोई नहीं है,
इच्छा हुई देखें कि क्या यह बात सही है ॥
उन के अतुल बल शक्ति की करने को परीक्षा,
ठहरे हुए हैं युद्ध की करते हैं प्रतीक्षा ॥२७॥
श्री राम जी को अस्तु सुनाओ यही संवाद,
युद्धार्थ आप को अहो हम कर रहे हैं याद ।
बेकार शस्त्र थे पड़े वह होगये हैं जीर्ण,
लेकर उन्हें हूजे सशीघ्र युद्ध में अवतीर्ण ॥
इतने दिनों पर्यंत जो वेतन है चुकाया,
जिन सैनिकों को, उनका समय आज है आया ॥२८॥

संक्षिप्त में शब्दों का यही अर्थ है बस शुद्ध,
देते हैं निमंत्रण उन्हें करने का अभी युद्ध।
जा कहदो सकल सैन्य सहित शीघ्र ही आयें,
हम बालकों का वह अहो उत्साह बढ़ायें ॥
यह करके श्रवण दूत नृपति पास गया शीघ्र,
कहने लगा श्री राम जी से उन के शब्द तीव्र ॥३९॥
ठहरे हुये हैं सैन्य युक्त वह युगल कुमार,
हैं दिव्य दीप्ति तेज सहित काम के अवतार ॥
उन को नहीं है आप के विक्रम की बात याद,
हैं इस लिये करते थे अहो व्यर्थ विसंवाद ॥
सुकुमार सुभग तन से नहीं दिखता उन्हें प्रेम,
होना है ज्ञात चाहते वह हैं नहीं निज क्षेम ॥४०॥
कहते थे हैं युद्धार्थ पास आप के आये,
क्या आप से कहैं जो कटुक शब्द सुनाये।
वह हैं अबोध, और क्षणिक बल से हैं उद्धत,
निज शक्ति, तेज का उन्हें अभिमान है अमित ॥
कहते थे सिंह शक्ति का मर्दन करेंगे वह,
निश्चल सुमेरु शीर्ष पै अपने धरेंगे वह ॥४१॥

श्री राम जी ने शब्द किये दूत के श्रवण,
करने लगे विचार हुये मौन एक क्षण।
श्री लक्ष्मण, शैलेश, श्रवण करके शब्द युद्ध,
हो रक्त वर्ण वह हुये अत्यंत हृदय क्रुद्ध॥
सामंत गण समस्त वीर रस में हुये लिप्त,
तत्काल जगा शौर्य पड़ा था हुआ जो सुप्त॥४२॥
श्री राम जी कहने लगे, मंत्री गणों से तब,
हे नीति विशारद ! कहो कर्तव्य क्या है अब।
मंत्री गणों ने एक स्वर से शीघ्र कहा यह,
जो क्षुद्र बल, अभिमान से उद्धत हुये हैं वह॥
अतएव शत्रु गण का शीघ्र कीजिये दमन,
यह उन की युद्ध दाह नाथ कीजिये शमन॥४३॥
तब सेना पति को राम जी ने शीघ्र बुलाया,
सब सैन्य सजा लाओ, यही हुक्म सुनाया।
क्षण एक मध्य सैन्य सकल होगई एकत्र,
गज, रथ, व पियादे समस्त सज गये विचित्र॥
सुग्रीव, श्री हनुमान, नील, नल औ भामंडल,
कटिबद्ध हुये युद्ध हेतु वीर वर प्रबल॥४४॥

जा पहुंचे शत्रु सैन्य के सम्मुख वह प्रबल वीर,
तैयार हुये युद्ध को युग वीर भी प्रणवीर।
सैनिक हुये समस्त हां तत्काल ही प्रबुद्ध,
युग ओर प्रबल तेज युक्त होने लगा युद्ध ॥
वीराग्रणी युग वीर चपल रथ पै थे चढ़े,
युद्धार्थ सैन्य मध्य अतुल बल से थे बढ़े ॥४५॥
युगवीर चलाने लगे अत्यंत तीक्ष्ण तीर,
क्षण मध्य में व्याकुल किये अरि पक्ष के सब वीर।
सामन्त गणों को स्वशक्ति से किया थकित,
अवलोक युद्ध की कला सब होगये चकित ॥
वीरों की प्रबल मार से सैना हुई व्याकुल,
सामन्त गण परास्त हुये निज हृदय आकुल ॥४६॥
जिस ओर युगल वीर थे रथ अपना घुमाते,
उस ओर के वीरों को थे पीछे ही हटाते।
जो कोई विकट भट था उन के साम्हने आता,
वह सह न सकता वार था हट पीछे को जाता ॥
सुग्रीव श्री हनुमान प्रबल वीर भामंडल,
सब वीर पराक्रम विलोक होगये विकल ॥४७॥

लड़ने को साम्हने न कोई आया अहो वीर,
श्री राम लक्ष्मण हुये सम्मुख अहो रणधीर।
होने लगा संग्राम पिता पुत्र मध्य घोर,
होती न पराजय थी अहो किन्तु किसी ओर॥
श्री लक्ष्मण जी शक्ति भर थे तीर चलाते,
तिनके के सदृश थे सभी वह व्यर्थ ही जाते॥४८॥
निज शत्रु समझ करते थे लक्ष्मण जी प्रबल वार,
श्री राम जी भी शस्त्र चलाते थे प्रलय कार।
युग वीर नहीं किन्तु थे विचलित तनिक होते,
बलभद्र औ केशव का सभी मान थे खोते॥
इस वीरता, इस शूरता से युद्ध थे करते,
अवलोक नहीं धैर्य हृदय वीर गण धरते॥४९॥
निज युद्ध निपुणता से हां करते हुये विस्मित,
कायर जनों के मनको हां करते हुये चकित।
श्री राम लक्ष्मण जी के तीरों को तोड़ते,
रथ और ध्वजा अश्व के मस्तक को फोड़ते॥
देवों के पराक्रम को भी लज्जित था कर दिया,
क्षणमध्यमें हरि, हरका विकल मन था करदिया॥५०॥

सुरलोक से सुर पुष्प वृष्टि थे वहां करते,
जयकार शब्द द्वारा थे गुंजित गगन करते।
देवांगनाएं हर्ष से कौतुक थीं देखतीं,
वीरों का पराक्रम थी मुदित हो विलोकतीं॥
नारद जी भी श्री जानकी संयुक्त व्योम में,
थे युद्ध देखने हुये हर्षित अहो मन में ॥५१॥
निज पुत्र का साहस अदम्य शक्ति बल अमित,
अवलोक जानकी जी हृदय होती थीं पुलकित।
रथ और ध्वजा अस्त्र को लखि छेदते हुये,
अपने प्रबल बाणों को निफल देखते हुये॥
लक्ष्मण जी हृदय में हुये अत्यंत क्रोध युक्त,
कर मध्य चक्र रत्न लिया वीरता संयुक्त ॥५२॥
कहने लगे ऐ बालको! होकर के सावधान,
मेरे हितैषी वचनों को कीजे श्रवण दे ध्यान।
सुकमार औ अबोध हो बालक अहो अभी,
देखा नहीं था युद्ध मेरा आपने कभी॥
अतएव था अबतक किया मैंने ये युद्ध खेल,
मेरा न शस्त्र अब सकोगे बालको तुम झेल ॥५३॥

अतएव शीघ्र राम जी की तुम शरण आओ,
लो मांग क्षमा जीते जी घर अपने को जाओ।
सुन्दर कुमार देख हृदय प्रेम उमड़ता,
तुम पर नहीं मेरा है शस्त्र इसलिये चलता॥
कर शब्द श्रवण वीर लक्ष्मण के युगल वीर,
कहने लगे तत्काल शब्द वीरवर गंभीर॥५४॥
लेकर के शस्त्र हाथ में क्यों आप रहे फूल,
क्यों व्यर्थ शूर वीरता में आप रहे भूल।
हम हैं नहीं रावण जिसे था मार गिराया,
बल, शक्ति दिखाने का समय आज है आया॥
मत व्यर्थ समय वाद में अपना गमाइये,
कुछ शक्ति पराक्रम है, तो हम को दिखाइए॥५५॥
सुन कर सशीघ्र हरि ने प्रबल चक्र घुमाया,
एवं सरोष सामने वीरों के चलाया।
हां किन्तु चक्र कर सका उनका न तनिक घात,
पहुंचा सका उनको नहीं किंचित् अहो आघात॥
आया सशीघ्र लौट पुनः लक्ष्मण जी पास,
यह देख लक्ष्मण जी हुए अति हृदय उदास॥५६॥

कहने लगे कैसे हैं वीर शक्ति, बल प्रबल,
है होगया अमोघ चक्र रत्न भी विफल।
इतने में श्री नारद जी भी सम्मुख अहो आए;
एवं विनोद युक्त मधुर शब्द सुनाए॥
यह आप युद्ध कर रहे जिन से कि हैं विचित्र;
वे वीर युगल हैं श्री सीता के वीर पुत्र ॥५७॥
हैं चर्म शरीरी, अहो! वह विश्व में अजय,
उन पर न आप पासकेंगे वीर वर विजय।
करते ही श्रवण राम लक्ष्मण जी प्रेम युक्त,
उतरे विमान से हुए सुत प्रेम में अनुरक्त॥
युग पुत्र भी तत्काल हृदय धार विमल हर्ष,
अति भक्ति, विनय युक्त किया पद कमल स्पर्श ॥५८॥
श्री राम जी युग पुत्र को अपने लगा गले;
अतिशय प्रमोद धार हृदय हर्ष से मिले।
अनिवार्य पुत्र प्रेम से पुलकित हुआ हृदय,
संग्राम भूमि होगई अत्यंत मोदमय॥
क्या हर्ष हुआ उस समय श्री राम को ललाम;
वर्णन नहीं कर सकती है कवि लेखनी तमाम ॥५९॥

निज तात गुरु जनों को इस प्रकार से अक्षय,
प्रण वीर कुमारों ने दिया शक्ति का परिचय।
श्री जानकी निर्वास का बदला था चुकाया,
संसार में वीरत्व का डंका था बजाया॥
हैं धन्य! धीर वीर औ प्रण वीर हे कुमार,
हैं धन्यवाद मात पिता को अहो शत बार॥६०॥
फिर से यहां अवतार लें ऐसे कुमार वीर,
प्रणपूर्ति हेतु करदें समर्पण सकल शरीर।
धर्मार्थ स्वजीवन समस्त अपना लगादें,
वीरत्व की हृदयों में विमल ज्योति जगादें॥
करदें मृतक स्वजाति का फिर से अहो उद्धार,
इस जैन धर्म का अहो बेड़ा लगा दें पार॥६१॥
श्री वीर से है प्रार्थना आशा सफल करो,
दृढ़ आत्म शक्ति से हृदय परिपूर्णतः भरो।
आलस में पड़े बालगणों को अभय करो,
साहस, तथा दृढ़ता दे दुरित भीरुता हरो॥
बालक गणों से लग रही "वत्सल" को बड़ी आस,
प्रणवीर वनें करदें हमारा सफल प्रयास॥६२॥

## २. युद्धवीर प्रद्युम्न कुमार

करता श्री जिनेन्द्र देव वीर का मैं ध्यान,
संसार के वीरों में महावीर जो प्रधान।
ले ध्यान की कमान क्षपक श्रेणी रथ चढ़े,
बलवान मोह सैन्य में उत्साह से बढ़े॥
क्षायिक ले बाण तान लोभ भट को सँहारा,
तत्काल प्रबल वीर मोहशूर को मारा ॥१॥
था नष्ट भ्रष्ट कर दिया मिथ्यात्व गढ़ प्रबल,
साहस समेत प्राप्त किया था अनंत बल।
एवं सशीघ्र मोक्ष नगर प्राप्त था किया,
पाणिग्रहण शिव देवी कुमारी से था किया॥
पाये थे आठ रत्न और भी अनंत गुण,
संसार के वीरों में सर्व श्रेष्ठ थे निपुण ॥२॥

क्या वीर कुमारों की करामात सुनावें,
है एक से बढ़ कर तुम्हें क्या बात बनावें।
दृढ़ता की कहानी है एक से भी इक विचित्र,
कुल वीरता का खींच दिखावें तुम्हें क्या चित्र ॥
थोड़ी सी चाशनी मगर तुमको हैं चखाते,
लो सुन लो गौर करके हैं कुछ हाल सुनाते ॥३॥
द्वारावती नगरी थी भुवन में महा सिरताज,
करते थे सुखद राज श्री कृष्ण जी महाराज।
पटरानी रुक्मणी थी रति समान गुण निधान,
उस के गुणों में रक्त थे श्री कृष्ण जी महान ॥
उन के ही गर्भ में श्री प्रद्युम्न जी आये,
महाराज नहीं हर्ष से मन में थे समाये ॥४॥
जब जन्म हुआ उन का एक घटना हुई तब,
हम तुम को सुनाते हैं सुनो उसका हाल सब ॥
था एक दैत्य शत्रु पूर्व जन्म का महा,
अपने विमान में वह मोद युत था जा रहा ॥
वह आया श्री कृष्ण के उत्तंग महल तक,
उसका विमान रुक गया तब आके अचानक ॥५॥

करने लगा विचार हां तत्काल ही फिर वह,
नब उसको अवधि ज्ञान से था ज्ञात हुआ यह।
था पूर्व जन्म मध्य मेरा शत्रु जो प्रबल,
उसका हुआ है जन्म यहां पर अहो विमल॥
अतएव है कर्तव्य मेरा इस समय यह अब,
ले जाऊं उसे हर के औं बदला चुकाऊं सब॥६॥
यह कर विचार आया महल मध्य दुख निकेत,
माया से द्वार रक्षकों को कर दिया अचेत।
तत्काल गया क्षुद्र रूप करके महल में,
बेहोश रुक्मिणी को अहो कर दिया पल में॥
फौरन कुमार को स्वगोद में उठा लिया,
ले आया निज विमान में मनको कड़ा किया॥७॥
आकाश में ला कहने लगा करके नेत्र लाल,
क्या हाल बनाऊं तेरा बतला मुझे इस काल।
तू ने मुझे उस जन्म में जो दुःख था दिया,
मेरी प्रिया प्यारी से मुझे था अलग किया।
अब आज मेरे वश में अरे दुष्ट तू पड़ा,
अब कह मैं तुझे इस समय क्या दंड दूं कड़ा॥८॥

यह कहके उसके मारने का प्रण था दृढ़ किया,
एवं उसे तक्षक पहाड़ पर था ले गया।
अत्यंत भयानक था एक वन वहां महान,
उसमें विशाल एक बड़ी थी अहो चट्टान॥
मोटी तथा मज़बूत थी लम्बी पचास हाथ,
हां रखदिया चट्टान के नीचे था क्रोध साथ॥६॥
पैरों से तथा खूब ज़ोर से दबा दिया,
कहने लगा रे दुष्ट! भोग तूने जो किया।
यह करके कार्य वह, हुआ हर्षित महा मनमें,
फिर चलदिया निज धाम, छोड़ कर उसे वनमें॥
अब आओ! सुनाएं तुम्हें! आगे का कुछ बयान;
क्या हाल हुआ उस कुमार का सुनो दे ध्यान॥१०॥
बालक था पुण्यवान वह, था वज्र का शरीर,
अतएव तनिक भी नहीं भयभीत हुआ वीर।
शुभ पुण्य के प्रताप से, उसका न हुआ घात,
अत्यंत मोदमय रहा, वह खेलता सुख दात॥
उस वीर, धीर के महान श्वास बल से ही,
मज़बूत वह चट्टान थी कंपित सी हो रही॥११॥

उसही समय गगन में मेघकूट पुर नरेश,
बैठे हुए जाते विमान में थे नभ प्रदेश।
चट्टान को हिलती हुई देखा जो उन्होंने,
आये सशीघ्र वह वहां विस्मित हुए मनमें ॥
चट्टान को निज मंत्र बलसे शीघ्र उठाया,
सुन्दर कुमार को वहां लेटा हुआ पाया ॥१२॥
तत्काल लिया उसको उठा अपनी गोद में,
अपनी प्रिया को दे दिया आ करके मोद में।
पटरानी के था भी नहीं कोई भी अहो सुत,
लेकर उसे अपने हृदय में वह हुई मुदित ॥
राजा ने उसे पुण्यवान वीर लखि अधिक,
उसही समय युवराज पद का कर दिया तिलक ॥१३॥
आ राजधानी मध्य पूर्ण हर्ष मनाया,
उत्साह युक्त खूब था धन धान्य लुटाया।
फिर नाम करण था किया प्रद्युम्न महावीर,
बढ़ने लगा कुमार वहां वीर धर्मधीर ॥
श्री कृष्ण रुक्मिणी को हुआ था महान शोक,
पश्चात् शांत मन हुये वह कर्म गति विलोक ॥१४॥

दोयज के चन्द्रमा सदृश बढ़ने लगा कुमार,
होने लगा बल, बुद्धि का प्रति दिन अहो विस्तार ।
हां अल्प समय मध्य ही भूषित हुआ सद्गुण,
वह होगया संपूर्ण शस्त्र कला में निपुण ॥
अत्यंत पराक्रम महान वीरता प्रचण्ड,
गंभीरता औ धीरता जागृत हुई अखंड ॥१५॥
यदि कोई प्रबल शूरवीर सिर था उठाता,
महाराज के ऊपर अगर चढ़कर कोई आता ।
संग्राम हेतु साम्हने आता अगर कोई,
भुजबल की शान आके दिखाता अगर कोई ॥
तत्काल प्रबल बलसे करके मान उसका नष्ट,
बल, शक्ति, पराक्रम को था कर देता वह विनष्ट ॥१६॥
विख्यात नरेशों का हां करता प्रताप चूर,
करने को दिग्विजय महान चल दिया वह शूर ।
निज शस्त्र कला द्वारा नरेशों को झुकाता,
अपने अखंड बलका चमत्कार दिखाता ॥
प्रणवीर, पराक्रम से हृदय सब का हिलाता,
वसुधा में सकल ओर विजय नाद सुनाता ॥१७॥

विद्याधरों को करता हुआ वह अहो विजित,
सम्मान सहित आया नगर में विभूति युत।
महाराज ने उत्सव महान उस समय किया,
वसुधा के नरेशों को निमंत्रित तथा किया ॥
एवं समस्त नृप व प्रजागण के ही समक्ष,
उसको दिया युवराज का पद उसही समय दक्ष ॥१८॥
अत्यंत हर्ष युक्त वह महिमा से विभूषित,
करने लगा समस्त प्रजागण का मन हर्षित।
महाराज के ये पंचशतक और भी कुमार,
होने लगा उनके हृदय में द्वेष का प्रसार ॥
प्रद्युम्न का प्रताप न किंचित् सहन हुआ,
अति तीव्र क्रोध दाह से तन, मन दहन हुआ ॥१९॥
उनकी सभी माताओं ने लांछित उन्हें किया,
द्वेषाग्नि को हृद्तल में प्रबल प्रज्वलित किया।
कहने लगीं हे शक्तिहीन ! कायरो कुपूत,
क्या पास तुम्हारे हैं राजपुत्र का सबूत ॥
जिस की न जाति पाँति का कुछ भी पता रहा,
युवराज पद को प्राप्त किया उसने है अहा ॥२०॥

तुम राज्य से वंचित हुये हो प्राप्त तिरस्कार,
रहते हो बने दास, है जीतव्य को धिक्कार।
अत्यंत तिरस्कार पूर्ण शब्द श्रवण कर,
मनमें किया विचार सभी ने यही मिलकर ॥
दिखता है हम: सभी का इसी बात में कल्याण,
उसका किसी प्रकार से कर देवें नष्ट प्राण ॥२१॥
थे इस लिये कुमार की वह घात में रहते,
करने को प्राण नष्ट, विविध यत्न थे करते।
पर उनका नहीं होता एक भी सफल उपाय,
था पुण्यवान कष्ट भी होता उसे सुखदाय ॥
करके अनेक यत्न जबकि हार गये वह,
मिलकर सबोंने एक तब षडयंत्र रचा यह ॥२२॥
वह ले गये कुमार को विजयार्द्ध शिखर पर,
उस गिरि पै दिखाया, उन्होंने एक था गोपुर,
कहने लगा तब वज्रदंष्ट्र जो कि था प्रधान,
जो कोई इस गोपुर में जाएगा अहो महान ॥
वह पायगा अनंत विभव और अमित धन,
अतएव तुम ठहरो, वहां जाता मैं इसी क्षण ॥२३॥

सुनकर कहा प्रद्युम्न ने ठहरो यहां सभी,
क्यों कष्ट आप करते हैं, जाता हूँ मैं अभी।
यह कह किया प्रवेश था गोपुर में वेग से,
किंचित् न किसी का था अंदेसा तनिक उसे॥
ठोकर लगाकर पैर की, दृढ़ द्वार को खोला,
रक्षक वहां का देव था, वह क्रोध से बोला॥२४॥
रे मूर्ख मनुज! क्यों? यहां मरने को है आया,
क्यों सोते हुये शेर को, तू ने है जगाया।
तू जानता नहीं यहां करते निवास हम,
बेख़ौफ आ धँसा नहीं दिलमें किया कुछ ग़म॥
इस अपने किये की अभी पाता है सज़ा तू,
यों मुझको छेड़ने का हां चखता है मज़ा तू॥२५॥
यह कहके बड़े वेग से गुस्से में हुवा वह,
करने कुमार का सँहार आगे बढ़ा वह।
तब तीव्र नाद से कुमार ने कहा स्पष्ट,
रे मूढ़ असुर! अपने आप बक रहा क्या दुष्ट॥
कुछ तुझमें अगर बल है, तो आ साम्हने मेरे,
कर दूँगा होश ठीक अभी मैं सभी तेरे॥२६॥

आँखें दिखा क्यों लाल, लाल तर्ज रहा है,
रे भीरु ! व्यर्थ इस तरह क्यों गर्ज रहा है।
तू जानता नहीं मुझे मैं वीर हूँ अखंड,
आ युद्ध के लिये मैं करूंगा तेरे शत खंड ॥
सुनते ही देव पूर्णतः गुस्से से होके लाल,
झपटा कुमार पर बड़े ही वेग से तत्काल ॥२७॥
तब शीघ्रतः कुमार भी आगे को बढ़ गया,
दोनों में मल्ल युद्ध प्रबल बल से छिड़ गया।
दोनों ही वीर पूर्ण लगाते थे ज़ोर को,
कह करके वीर शब्द मचाते थे शोर को ॥
अपने प्रचंड बल को दिखाया कुमार ने,
वह वीर देव उससे लगा शीघ्र हारने ॥२८॥
कुछ ही समय पश्चात् वीरता को दिखा कर,
प्रद्युम्न वीर ने उसे पृथ्वी पे गिराकर।
औ चढ़ गया छाती पर वीर रस में वह पगा;
तब हाथ जोड़ देव क्षमा माँगने लगा ॥
प्रद्युम्न वीर ने क्षमा तब उसको कर दिया,
तब देवने कुमार का आदर बहुत किया ॥२९॥

औ रत्न सिंहासन पै विनय युक्त बिठाया,
बहुमूल्य मुकुट भूषणों से उसको सजाया।
विद्याएं पाँचसौ महान भी प्रदान कर,
रत्नों का खज़ाना दिया अनुपम तथा सुखकर ॥
शुभ वस्त्र भूषणों से अलंकृत कुमार तब,
निज भाइयों के पास अहो आया लौट जब ॥३०॥
अत्यंत आश्चर्य हृदय में हुआ उनको,
जीता हुआ विलोक दुःख भी हुआ मनको।
तब और भयानक गुफ़ाओं मध्य ले गये,
प्रद्युम्नदेव को वहाँ वह भेजते हुये ॥
जाकर कुमार ने वहां देवों को हराया,
विद्यायें विमल वस्त्र विभव साथ में लाया ॥३१॥
विकराल चतुर्दश वनों में ले गये सब वह,
आता था लौट पूर्ण पराक्रम दिखाके वह।
जाता था हो निःशंक दैत्य, देव से अजय,
देवोपुनीत वस्तुएं लाता था कर विजय ॥
निर्भय समझ कुमार को लखि मारना दुःसाध्य,
दुःखित हृदय लेआये सकल बंधु नगर मध्य ॥३२॥

स्वर्गीय भूषणों से सकल देह अलंकृत,
कमनीय कामिनीयों का करता हृदय मोहित।
विद्या से विभूषित औ काम के सदृश सुन्दर,
उत्साह, हर्ष युक्त गया मातृ के मंदिर॥
अत्यंत मातृ प्रेम से परिपूर्ण हृदय धाम,
जाकर विनय संयुक्त किया मात को प्रणाम॥२३॥
सुन्दर कुमार देख हृदय वह हुई मोहित,
जलने लगा शरीर काम ज्वरसे हो ज्वलित।
हा! ज्ञान रहित हो हुई वह पूर्णतः आसक्त,
सुमति, विवेक शून्य मदन दाह मे संतप्त।
अतिशय पवित्र मन तथा होकर हृदय उदार,
कर भक्तिविनय आ गया तत्काल वह कुमार॥२४॥
उत्पन्न हुआ मां के हृदय मोह अति प्रबल,
तत्काल विरह ज्वाल से वह हो गई विकल।
पैदा हुई उस के हृदय में तीव्र काम दाह,
व्याकुल सी हुई भरने लगी गर्म गर्म आह॥
निर्लज्ज हुई पुत्र भाव भूल गई सब,
रह सक्ता कामदेव के सम्मुख है ज्ञान कब॥२५॥

महाराज को रानी की विकलता का समाचार,
जब ज्ञात हुआ, करने लगे वैद्यगण उपचार।
लेकिन न उस के दिल का दर्द कुछ भी हुआ कम,
बढ़ता गया उस का वह प्रबल रोग दम बदम ॥
बैठे थे महाराज सभा मध्य इक समय,
बैठा कुमार था समीप दिव्य प्रभामय ॥३६॥
कहने लगे हे मात रोग ग्रस्त अति दुखी,
जाकर समीप पुत्र उसे कर ज़रा सुखी।
सुनकर पिता की बात दुखित हो हृदय अपार,
तत्काल गया मातृ के समीप वह कुमार।
अपने समीप काम को आते हुए लखि कर,
अंगड़ाती हुई सेज से मदमस्त सी उठकर ॥३७॥
कहने लगी निर्लज्ज हो वह पाप पूर्ण बात,
हे कामदेव, है क्या तुम्हें गुप्त भेद ज्ञात।
मैं माता तुम्हारी कभी हरगिज़ भी नहीं हूं,
तुम कर लो श्रवण भेद जो कहती मैं सही हूं ॥
तक्षक पहाड़ पर शिला नीचे तुम्हें पाया,
अत्यंत मोद से तुम्हें मैंने था उठाया ॥३८॥

था उस समय विचार मैंने मन में यह किया,
तुम होगे तरुण तब तुम्हें बनाऊँगी पिया।
तुम हो गए तरुण हो तुम्हें देखकर के कल,
अत्यंत कामवेदना से मैं हुई विकल॥
अतएव प्राण प्रिय कुमार, मेरे हृदय हार,
कीजे विलास भोग मधुर मोद के दातार॥३६॥
मैं आप की चाहत में हुई हाय हूं विकल,
मुझ को न आप के बिना मिलती है ज़रा कल।
हां दीजे प्रणयदान विनय कर रही हूं मैं,
मुझ को बचाइए हे नाथ मर रही हूं मैं॥
मत एक क्षण को कीजिए अब आप हाँ विलंब,
कर दीजे पूर्ण आश मेरी हे हृदय अवलम्ब॥४०॥
यह पाप पूर्ण शब्द श्रवण करके वह चुप चाप,
कहने लगा कुमार मात कह रहीं क्या आप।
हो सकता पुत्र से ये घृणित काम है कैसे?
मुंह पर कभी लाना न आप शब्द फिर ऐसे॥
हैं आप पूज्य मात मैं हूं पुत्र आप का,
कर ज्ञान हृदय, त्यागिए संकल्प पाप का॥४१॥

यह कह के चला आया शीघ्र पाप से रहित,
पाकर अहो ! अपमान हुई रानी अति कुपित ।
क्रोधाग्नि उस के मन में प्रज्वलित अधिक हुई,
नागिन सी लगी देखने वह बुद्धि हत हुई ॥
तत्काल ही कुविचार हृदय उस के समाया,
सारा शरीर नोंच बुरा हाल बनाया ॥४२॥
महाराज के समीप गई करती वह रुदन,
कहने लगी अत्यंत रोष युक्त विकल मन ।
हा ! जिसको बड़े प्यार से सुत की तरह पाला,
वह अंत में निकला है कुटिल नाग हा ! काला ॥
यौवन से विभूषित मेरा सुकुमार देख अङ्ग,
पापी के हृदय मध्य प्रबल था जगा अनंग ॥४३॥
वह रोक सका मनको नहीं पाप पथ धँसा,
मेरी हा ! उसने की है इस प्रकार दुर्दशा ।
है शील बचाया स्वधर्म के प्रसाद से,
हां दीजिये भूपाल इसका दंड अब उसे ॥
जबतक न मृतक साम्हने देखूं उसे पड़ा,
पाऊंगी अन्न जल नहीं करती हूं प्रण कड़ा ॥४४॥

रानी के वचन वाण श्रवण करके सदृश शूल,
महाराज न्याय, नीति सकल धर्म गए भूल।
अपने समीप पंच सौ पुत्रों को बुलाया,
एवं कुमार प्राप्ति का सब भेद सुनाया॥
कहने लगे पश्चात्, है कुमार बड़ा दुष्ट,
ले जाके सैन्य साथ करदो उसका प्राण नष्ट॥४५॥
अत्यंत सरल था अहो! कुमार का हृदय,
उद्यान में बैठा था उस समय विचार मय।
सैना समेत जाके कुमारों ने छल किया,
क्षण मात्र में कुमार ने उनको विजित किया॥
उन सब को एक वापिका में कर दिया हां बंद,
बलवान कुँवर मोद से फिरने लगा स्वच्छंद॥४६॥
राजा ने सब सुतों का बुरा हाल सुना जब,
ले सैन्य विकट आया स्वयं युद्ध करने तब।
अति कालसी विकराल प्रबल सैन्य थी अनंत,
रथ, घोड़े, पयादे तथा सैनिक भी थे बलवंत॥
करने लगा कुमार भी भीषण महा संग्राम,
हो करके प्रलय काल सा सैना दली तमाम॥४७॥

यमराज सदृश भीम विकट मार मचाई,
राजा की प्रबल सैन्य सकल मार भगाई।
राजा ने किया युद्ध क्रोध युक्त भयानक,
विकराल शोर फैला अहो सारे गगन तक॥
अपनी समस्त शक्ति पराक्रम को लगाया,
विद्याओं सहित खूब ही हथियार चलाया॥४८॥
लेकिन कुमार को नहीं पीछे हटा सका,
उसकी समस्त शक्ति का था अंत हो चुका।
तत्काल ही कुमार ने दिखलाके बल अगाध,
एवं सशीघ्र नाग फाँस मध्य लिया बाँध॥
पश्चात् उन्हें छोड़ दिया और विनय से,
सब हाल सुनाया महारानी का भूप से॥४९॥
अत्यंत दुखित मन हुए महाराज कर श्रवण,
लज्जा से नम्र सिर हुआ उन का हाँ उसी क्षण।
इसी ही समय नारद जी थे आकाश से आए,
प्रद्युम्न जी को इस तरह शुभ शब्द सुनाए॥
हे वीर ! मैं सर्वत्र तुझे देख के हारा,
तू आज हुआ प्राप्त है, सुन शब्द हमारा॥५०॥

तेरे पिता श्रीकृष्ण जी और रुक्मिणी माता,
व्याकुल हैं तेरे देखने को सौख्य के दाता।
अतएव शीघ्र चल उन्हें देकर के दर्श वीर,
उन के हृदय को शीघ्र बंधा दे अहो तू धीर ॥
कर के श्रवण तत्काल ही हर्षित हुआ कुमार,
एवं किया महाराज को जाकर के नमस्कार ॥५१॥
कहने लगा पिता जी कृपा दृष्टि कीजिए,
अपराध क्षमा करके दया दान दीजिए।
अज्ञानता वश आप, को मैंने जो दुख दिए,
बालक समझ के मुझ को अहो ! माफ़ कीजिए॥
एवं पुनः माता को किया भक्ति से प्रणाम,
शुभ शब्द युगल दंपति से फिर कहे सुखधाम ॥५२॥
जाता हूं मैं स्वगेह को कीजे प्रभो ! श्रवण,
आज्ञा मुझे दीजे अहा होकर प्रसन्न मन।
ले आज्ञा इस प्रकार बैठ कर विमान में,
नारद जी सहित चल दिया आकाश मार्ग में॥
वह मार्ग में कौतुक अनेक अपने दिखाता,
द्वारावती नगरी को अहो था चला जाता ॥५३॥

देखा हा उसने मार्ग में सैनिक समूह को,
गज, रथ व पियादों तथा घोड़ों के व्यूह को।
कहने लगा नारद जी से तब उस समय कुमार,
ठहरी है यहां पर ये सैन्य किसलिए अपार ॥
नारद जी ने सुनाया उन्हें पूर्ण समाचार,
महाराज दुर्योधन का है यह राज्य सौख्यकार ॥५४॥
उनके उदधि कुमारी थी पुत्री विनयवती,
श्री कृष्ण जी के ज्येष्ठ पुत्र को दी गुणवती।
थे ज्येष्ठ पुत्र तुम कुमार तेज शक्तिवान,
लेकिन न तुम्हारा कहीं पाया पता निशान ॥
अतएव तुम्हारे कनिष्ट भ्रात के लिये,
देने को भवल सैन्य युक्त जा रहे हैं ये ॥ ५५ ॥
सुनकर कुमार छोड़कर विमान उस समय,
सैना के साम्हने गया होकर महा निर्भय।
सेनापती से कहने लगा पूर्ण कुपित हो,
यह राजकुमारी मुझे दे दीजिए अहो ॥
सुनकर प्रधान ने महान क्रोध युत कहा,
रे मूर्ख, कुटिल क्या ये शब्द मुंहसे कह रहा ॥ ५६ ॥

महाराज दुर्योधन की कुमारी यह गुण निधान,
क्यों छेड़ता है इसको तू बनकर महा नादान।
जा हट जा साम्हने से न दिखला ये व्यर्थ रोश,
सुन लेंगे कृष्ण जी तो हाँ कर देंगे ठीक होश॥
तब यह कहा कुमार ने सुनिए प्रधान जी,
दे दीजे यह कुमारी मुझे गुण निधान जी॥ ५७॥
होंगे न कृष्ण जी ज़रा इस बात से नाराज़,
नहिं देंगे आप यों तो मैं ले लूंगा बल से आज।
सैनिक समस्त सुनके हृदय में कुपित हुए,
दौड़े कुमार पर अहो आघात के लिए॥
लड़ने लगा कुमार सैनिकों से उसी दम,
दिखलाने लगा अपनी वीरता तथा विक्रम॥ ५८॥
जिस ओर वीर जोश से बढ़ जाता अग्रसर,
हट जाते थे सैनिक समस्त मार को खाकर।
करता हुआ सैनिक गणों के मध्य वह विनोद,
यह युद्ध था उसके लिए केवल ही खेल मोद॥
क्षणमात्र में भुजबल समस्त अपना दिखाया,
सैनापती को सैन्य सहित मार भगाया॥ ५९॥

औ क्षीन कुमारी को पराक्रम प्रताप से,
नारद जी पास ले गया कौशल कलाप से ।
नारद ने राजकन्या को सब भेद बताया,
श्री कृष्ण जी के ज्येष्ठ पुत्र हैं यह सुनाया ॥
पश्चात् शीघ्रता से द्वारिका को चलदिए,
थोड़ी ही देर मध्य वहां पर पहुंच गए ॥ ६० ॥
नारद से विनय युक्त तब कुमार ने कहा,
जाता हूं नगर की समस्त देखने शोभा ।
हां आप ठहरिए यहां हे पूज्य ! कुछ समय,
यह कहके चल दिया कुमार हो मुदित हृदय ॥
जाकर के उसने भानु कुँवर को था छकाया,
उपवन को सत्यभामा के था नष्ट कराया ॥६१॥
बलवान वासुदेव को कौशल सब दिखाकर,
माता के महल मध्य गुप्त वेश से जाकर ।
एवं बहुत प्रकार खेल औ विनोद से,
परिचय दिया था अपना उसे पूर्ण मोद से ॥
कहने लगा पश्चात् रुक्मिणी जी मात से,
मैं मिलना चाहता हूं अहो अपने तात से ॥६२॥

लेकिन न इस प्रकार से हरगिज मैं मिलूंगा,
मैं अपने पराक्रम का कुछ परिचय उन्हें दूंगा।
यह कहके मात रुक्मिणी को शीघ्र उठाकर,
कहने लगा वह शब्द यह आकाश में जाकर ॥
हे यादवो ! श्रीकृष्ण के हे वीर सुभट गण,
मेरे ये शब्द धैर्य सहित कीजिए श्रवण ॥ ६३ ॥
श्री कृष्णजी की प्यारी हृदय हारिणी प्रिया,
श्री रुक्मिणी देवी को है मैं ने हरण किया।
एवं इन्हें निज गेह लिये जाता हूं अभी,
ताकत है अगर तुम में छुड़ाओ तो मिल सभी ॥
कर शब्द श्रवण सर्व सभासद चकित हुये,
सैनिक समस्त शूर वीर क्रोध युत हुये ॥६४॥
सैनापती ने शीघ्र प्रबल सैन्य सजाई,
युद्धार्थ घोर नाद से रण भेरी बजाई।
बलवान श्री कृष्ण जी सैना सकल लेकर,
करने को युद्ध चल दिये अति क्रोध हृदय धर ॥
तब रुक्मिणी जी को बिठा नारद जी पास शीघ्र,
करने लगा कुमार युद्ध घोर और तीव्र ॥६५॥

सैना को स्वबल शक्ति से पीछें को हटाया,
वीरों को प्रबल मार से भय युक्त बनाया।
बलवान पांडवों का पराक्रम भी किया चूर,
हटने लगे पीछे को हां बलभद्र महाशूर ॥
श्री कृष्ण जी से युद्ध किया इस तरह कराल,
वह देख पराक्रम हुये चिंतित अहो तत्काल ॥६६॥
श्री कृष्ण जी तब क्रोध सहित साम्हने आये,
अत्यंत तीक्ष्ण औ अमोघ शस्त्र चलाये।
प्रद्युम्न जी ने सबको नष्ट क्षण में कर दिया,
घनघोर भयानक था युद्ध उस समय किया ॥
एवं अजेय कृष्ण जी की सर्व शक्ति को,
था नष्ट किया बल औ पराक्रम से युक्त हो ॥६७॥
नारद जी ने तब आके सकल भेद बताया,
प्रद्युम्न जी का पूर्व सब वृतांत सुनाया।
एवं पिता व पुत्र को आपस में मिलाया,
सप्रेम मिले बंधु सकल हर्ष मनाया ॥
पश्चात् भी कुमार ने प्रणवीरता सहित,
दिखलाया था अनेक बार बल अहो अमित ॥६८॥

वीरत्व को संसार में यूं अपना दिखाया,
प्रणवीर कुमारों में अपना नाम लिखाया।
निज कीर्ति से यदुवंश को उज्वल था कर दिया,
संसार में आदर्श, कुमारों का भर दिया॥
श्री वीर से है प्रार्थना अत्यंत विनय युक्त,
दें हमको अतुल बल करें कायरपने से मुक्त ॥६९॥
फिर वीर जैन जाति में ऐसे कुमार हों,
कर्तव्य के पालन में अटल वे शुमार हों।
निज धर्म के ऊपर समस्त करदें न्योछावर,
नैय्या जो डूबती है उसे पार देवें कर॥
प्रणवीर, कर्मवीर, तथा जां निसार हों,
अन्याय के सम्मुख खड़ग की तीव्र धार हों ॥७०॥

ॐ

# ३. वीर यशोधर कुमार

—×०×—
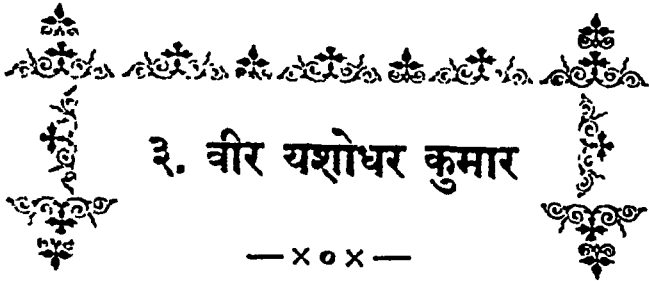
करता हूं महावीर बाहुबलि को मैं प्रणाम,
था तप किया अत्यंत कठिन घोर औ निष्काम।
आकरके लता चारों तरफ से चिपट गई,
सर्पों की सैन्य थी शरीर से लिपट गई॥
पर ध्यान से विचलित नहीं मनमें हुए किंचित्,
वह भरदें वीर बालको में वीरता अमित॥ १ ॥
प्रणवीर कुमारों में अलौलिक थी भरी शान,
प्रण अपने के ऊपर अहो दे देते थे वह जान।
संसार को थे अपनी करामात दिखाते,
अन्याय अत्याचार का बदला थे चुकाते॥
अभिमानियों का करते थे पलमें घमंड चूर्ण,
अन्याइयों को देते थे वह दंड अहो पूर्ण॥ २ ॥

उन वीर कुमारों का अलौकिक है सब चरित्र,
हर एक बात उनकी है अतिशय अहो विचित्र ।
आओ तुम्हें वीरत्व की झांकी हैं दिखाते,
कुछ उनकी वीरता की कहानी हैं सुनाते ॥
बन जाओ तुम भी उनकी तरह वीर और धीर,
करदो सुधार जाति धर्म का ऐ कर्मवीर ॥३॥
थी राजधानी गजपुरी राजा थे सत्यंधर,
पटरानी थी विजयावती रति की तरह सुंदर ।
था भूपको विजया के रूप पर अधिक अनुराग,
आसक्त थे अत्यंत दिया राज्य कार्य्य त्याग ॥
था राज्य कर्मचारी एक काष्टांगार,
संपूर्ण राज्य का उसे था दे दिया अधिकार ॥४॥
उसके दुरित हृदय में राज्य लोभ अमित था,
अत्यंत कपट पूर्ण और दुष्ट प्रकृति था ।
पैदा हुआ उसके हृदय में यह घृणित विचार,
यद्यपि है प्राप्त राज्य का मुझको सभी अधिकार ॥
कहलाता राज्य का मगर सेवक हूं पराधीन,
मैं इसलिए बनूं किसी प्रकार से स्वाधीन ॥ ५ ॥

कुछ दुष्ट मंत्रियों से किया उसने गुप्त मंत्र,
एवं रचा राजा के नष्ट करने का षड्यंत्र ।
रानी थी गर्भ युक्त कृपित काय शिथिल अङ्ग,
थे इसलिये रहते थे नृपति नित्य उसके संग ॥
थे एक समय करते विपिन मध्य नृप विहार,
सेना समेत भेजा उनको मारने सरदार ॥६॥
था कोई अंदेशा नहीं राजा थे हृदय शुद्ध,
करने लगे सैनिक समस्त उनसे अहो युद्ध ।
राजा ने मंत्र बल से किया रानी को चलित,
करने लगे वह युद्ध सैनिकों से फिर अमित ॥
सैनिक थे बहुत शस्त्र प्रबल युक्त शूरवीर,
महाराज अकेले थे एक ओर धीर वीर ॥७॥
अतएव कर सके न उनके साथ वह संग्राम,
मिल सैनिकों ने कर दिया उनका तमाम काम ।
आ काष्टांगार को सब हाल सुनाया,
भूपाल के मरने का उसने हर्ष मनाया ॥
संपूर्ण प्रजागण को हुआ मन में अमित शोक,
दुःखित हुये थे उसका यह अन्याय सब विलोक ॥८॥

विजया महारानी जी इधर पुण्य प्रबल से,
महाराज के किये हुए उस यंत्र के बल से।
नभ द्वारा चलित हो के पड़ी श्मशान में,
व्याकुल हुई बेहोश हुई उस स्थान में॥
उसके हृदय में दुःख हुआ था अहो! अपार,
हां पूर्ण चन्द्र सम हुआ उस ही समय कुमार॥९॥
उसके प्रचण्ड पूर्व पुण्य योग से स्वयमेव,
वनदेवी ने आकर के की विजयावती की सेव।
जब होश हुआ रानी को देवी ने कहा तब,
सेवा में उपस्थित हूं, न दिल खेद कर तू अब॥
यह वीर पुत्र तेरा होगा विश्व में प्रसिद्ध,
हां प्राप्त करेगा स्वराज्य और रिद्धिसिद्धि॥१०॥
इस नगरके श्रेष्ठी प्रधान आयेंगे यहां,
शुभ वृद्धि पायगा कुमार उनके घर महा।
हे! रानी गुण निधान पुत्र रख यहां सुभग,
कुछ ही समय के हेतु रहना उससे तू अलग॥
करते नगर में सेठ जी गंधोत्कट निवास,
शुभ पुत्र उसही दिन हुआ उनके था सुगुणराशि॥११॥

संध्या के समय पुत्र मरण प्राप्त हो गया,
श्रेष्ठी के हृदय का था अहो ! रत्न खो गया।
उसही समय लाये थे उसे श्मशान में,
करने को मृतक कार्य खेद युत हुए मनमें ॥
रख करके श्मशान में गृह जाने लगे जब,
सुन्दर कुमार एक वहां देख पड़ा तब ॥१२॥
लेकर उसे स्वगोद में हर्षित हुये हृदय,
पत्नी को दे कहने लगे अत्यंत मोद मय।
कैसे कहा था पुत्र मृतक तू ने यह सुकुमार,
जीता हुआ है देख ज़रा आँख को उघार ॥
यह कहके दिया हर्ष से पत्नी की गोद में,
दुःखित हृदय, उसका था हुआ मग्न मोद में ॥१३॥
देवी उधर रानी को अपने साथ लेगई,
रख उसको शुभ स्थान में विलुप्त होगई।
श्रेष्ठी के यहां आयु वृद्धि गत हुआ कुमार,
था कामदेव के सदृश मोहक तथा सुकुमार ॥
था बालपन से उसमें पराक्रम अहो ! अपार,
प्रतिभा कला सम्पन्न मानवों का हृदय हार ॥१४॥

श्रीमान् आर्य नन्दि सुगुरु के समीप श्रेष्ठ,
विद्याएं धर्म, नीति शास्त्र पढ़ चुका यथेष्ठ।
एवं समस्त शस्त्र कला में हुआ निपुण,
बलशक्ति तेज युक्त था भूषित सकल सुगुण ॥
अतिशय प्रताप पूर्ण प्रभादीप्ति पुंज वह,
वीरत्व से मंडित मनोज्ञ धर्म कुंज वह ॥१५॥
संपूर्ण मानवों का था करता प्रसन्न मन,
प्रणवीरता, गंभीरता संयुक्त विमल तन।
प्रतिभा निधान, गुण महान युक्त अखंडित,
रहने लगा सुमतिनिकेत बुद्धि से मंडित ॥
उस नग्र में था नन्द गोप नाम ग्वाल राज,
बन को गया था एक दिन गाएं समस्त साज़ ॥१६॥
उसकी सभी गायों को था भीलों ने लिया रोक,
आने न दिया नग्रमें उसको हुआ अति शोक।
तब उसने नृपति से कहा अपना ये सकल हाल,
राजा ने भेजी सैन्य पकड़ने उन्हें तत्काल ॥
भीलों से हुई सैन्य पराजित मगर सकल,
यह देख नन्दगोप हुआ मनमें अति विकल ॥१७॥

यह घोषणा उसने नगर में की अहो तभी,
जो गाएं छुड़ा लायगा भीलों से जा अभी।
उसको मैं दूंगा स्वर्ण अमित और विभव राशि,
करके श्रवण कुमार गया भीलगणों पास ॥
करके प्रचंड युद्ध था भीलों को भगाया,
निज शक्ति के बल से उन्हें पीछे को हटाया ॥१८॥
वह भील प्रबल बल से हुये थे जो मद सहित,
उनको कुमार ने दिया कर क्षण में मद रहित।
सरदार था भीलों का विनय युक्त हो बड़ा,
आकर कुमार की शरण, चरणों में गिर पड़ा ॥
लाकर समस्त गायें दीं आ नन्दगोप को,
हर्षित हुआ वह प्राण ही मानो मिला उसको ॥१९॥
उसने कुमार का किया भरपूर ही सत्कार,
की भक्ति विनय और किया झुकके नमस्कार।
कहने लगा हे देव! अतुल शक्ति के निधान,
तुमने किया उपकार अतुल है मेरा महान ॥
हैं आप वीर धीर औ मनुजों में शिरोमणि,
दीनों के नाथ हैं तथा वीरों में हैं निपुण ॥२०॥

इस भांति पराक्रम को दिखाता विविधि प्रकार,
रहने लगा आनन्द युक्त वह अहो ! कुमार ।
उसही नगर में श्रेष्ठी श्री दत्त थे प्रधान,
उनके यहाँ विद्याधरों की थी सुता महान ॥
वीणा के बजानें में वह अत्यंत थीं निपुण,
एवं किया था उसने अपने मन में यही प्रण ॥२१॥
जो कोई मुझे वीणा बजाने में चतुर व्यक्त,
कर देगा पराजित वही होगा मेरा अनुरक्त ।
श्रीदत्त ने भारी सभा मंडप था बनाया,
एवं सभी नगरों के नरेशों को बुलाया ॥
आकर नरेश देने लगे वीणा परीक्षा,
सब हार गए मनकी हुई पूर्ण न इच्छा ॥ २२ ॥
तब ही कुमार वीणा बजाने में अति पुनीत,
निज वीणा बजा उसको लिया एक क्षण में जीत ।
कन्या, कुमार की कला, गुण पर हुई मोहित,
वरमाला गले डाल वह मन में हुई हर्षित ॥
यह देख दुष्ट काष्टाङ्गार मन जला,
कहने लगा राजाओं से दिखला कलह कला ॥ २३ ॥

यह क्षुद्र वणिक पुत्र है व्यापार के ही योग्य,
यह राज कुमारी है इसके सर्वथा अयोग्य।
विद्याधरों, राजाओं के होते हुए पर्याप्त,
कर सकता कैसे सुन्दरी यह रंक वणिक प्राप्त ॥
सुनकर सकल नरेश प्रबल क्रोध युत हुये,
उद्यत हुये ससैन्य वह संग्राम के लिये ॥२४॥
तब युद्ध के सम्मुख हुआ कुमार जीवंधर,
रणक्षेत्र में बढ़ा स्वधनुष हाथ में लेकर।
मृगराज हाथियों के झुंड पर ज्यों छुटता,
ज्यों तीव्र पवन वेग से तृण क्षण में टूटता ॥
त्यों वीर कुंवर के महा प्रचंड बाण से,
होने लगे नृप गण समस्त हीन प्राण से ॥ २५ ॥
भागे अहो! रणक्षेत्र से भयभीत हो सकल,
आए शरण कुमार की वह हो हृदय विकल।
तब कर दिया कुमार ने उन सबको ही क्षमा,
सर्वत्र ही विख्यात हुआ वह गुणोत्तमा ॥
कर प्राप्त सुन्दरी को हृदय मध्य हर्षधार,
रहने लगा विनोद मग्न वह अहो कुमार ॥ २६ ॥

ऋतुओं में श्रेष्ठ आया था ऋतुराज हां वसंत,
क्रीड़ा विनोद करते मनुज मन हुये पुलकंत।
मित्रों सहित कुमार भी क्रीड़ा को थे गये,
थे मोद मग्न वह सभी पुलकित हृदय हुये॥
कन्याएं दो सुर मंजरी गुणमाला सुगुणयुक्त,
करती थीं वहां क्रीड़ा सखी गण समस्त युक्त॥२७॥
इतने में नृपति का महा गजेन्द्र पट्ट बंध,
छूटा था अश्वशाल से मदमें हुआ अति अंध।
आया अहो! वसंत के क्रीड़ा स्थान में,
मनुजों को कुचलता हुआ हो मस्त शान में॥
सम्मुख कुमारियों के स्वमुख उसने था मोड़ा,
गंभीर नाद करता हुआ क्रोध से दौड़ा॥२८॥
आया अहो! वह शीघ्र ही गुणमाला के समक्ष,
आगे से हट गए समस्त बंधु, सुहृद दक्ष।
गुणमाला नहीं किंतु साम्हने से हट सकी,
व्याकुल तथा भयभीत हुई वह हृदय थकी॥
अत्यंत क्रोध से बढ़ा हाथी था मारने,
इतने में साम्हना किया झटपट कुमार ने॥२९॥

दाँतों को पकड़ वेग से उस पर किया प्रहार,
भुजदंड ठोक उसको दी अतिशय प्रचंड मार।
लगते ही तीव्र मार हुआ हाथी विकल मन,
मद नष्ट हुआ श्वान सदृश होगया तत्क्षण॥
इतने में महावत भी ढूंढता वहां आया,
हाथी को अश्वशाल में तत्काल लेगया॥३०॥
खाकर कुमार मार को हाथी हुआ था पस्त,
करता नहीं था ग्रास ग्रहण था हुआ अति सुस्त।
तब रक्षपाल ने कहा राजा से सकल हाल,
क्रोधित हुआ अत्यंत वह करके श्रवण उसकाल॥
यद्यपि प्रथम कुमार का वीरत्व लखि प्रचंड,
भीलों की जीत से अहो प्रताप सुन अखंड॥३१॥
वीणा में विजय पाने से क्रोधाग्नि थी ज्वलित,
हस्ती को ताड़ने से बढ़ गई थी वह अमित।
अतएव उसने सैनिकों को आज्ञा दी तभी,
ले आओ पकड़ उस कुमार को अहो! अभी॥
सैना समस्त शस्त्र सहित साज करके तब,
जाकर कुमार का स्थान घेर लिया सब॥३२॥

होकर कुमार उस समय मन मध्य अधिक क्रुद्ध,
मृग सैनिकों से सिंह सदृश करने लगा युद्ध।
सैनिक सभी भययुक्त हो तब भागने लगे,
श्रेष्ठी, कुमार से अहो तब कहने यह लगे॥
राजा के साथ युद्ध का नहीं अभी समय,
अतएव हे कुमार क्षमा भाव रख हृदय॥३३॥
करके पिता के शब्द श्रवण पूर्व मण विचार,
उसने न सैनिकों पै किया फिर ज़रा भी वार।
इतने में मनुज एक शुभ विमान से आकर,
बैठा कुमार लेगया नभ मध्य उड़ाकर॥
प्रिय यक्षदेव वह अहो कुमार का था मित्र,
अपने स्थान लेगया वह हो हृदय पवित्र॥३४॥
दे वस्त्र भूषणादि विमल फिर विदा किया,
वीराग्रणी कुमार भ्रमण हेतु चल दिया।
करने लगा विहार विविध देशों मध्य धीर,
दिखलाता पराक्रम अनंत वह था अपना वीर॥
जाता जहाँ पाता था वस्त्र भूषणादि मान,
वीरत्व को दिखलाता बढ़ाता था अपनी शान॥३५॥

वलवान नृपगणों को वनाता था अपना मित्र,
निर्भय विनोद युक्त था फिरता विमल चरित।
थे एक जगह पूर्व मित्रगण अहो मिले,
आनंद सहित प्रेम युक्त वह मिले गले॥
कहने लगे कुमार से वह एक समाचार,
हम एक समय जारहे तापस गणों के द्वार॥३६॥
देखा था हमने आप की माता को वहाँ पर,
वह शोक मग्न थी हुई निज हाल सुनाकर।
तव हमने आपका सभी वृतान्त सुनाया,
उनके हृदय को पूर्ण तरह धैर्य वँधाया॥
अव आप वहाँ चलिये उन्हें धैर्य दीजिये,
चिंता समस्त दिल की प्रभो दूर कीजिये॥३७॥
माता समीप तव गया वह शीघ्रतः कुमार,
जाकर किया चरण में विनय युक्त नमस्कार।
माता थी पुत्र शोक से अतिशय हृदय संतप्त,
अवलोक वार, वार पुत्र को न हुई तृप्त॥
एवं कुमार भी हुआ गद्गद हृदय अपार,
अत्यंत प्रेम युक्त मिला भक्ति हृदय धार॥३८॥

माता ने प्रेम से उसे आशीष दी मधुर,
हे पुत्र विश्व में अखंड राज्य हो अमर ।
माता ने पुनः पूछा कि ऐ वीरवर कुमार,
मेरे लिये रहने का किया क्या अहो विचार ॥
अब तक न किया तूने अपने राज्य का उद्धार,
हे वीर प्राप्त क्या किया अपना नहीं अधिकार ॥३९॥
माता के मधुर शब्द श्रवण करके गुण निकेत,
निज राज्य के संबंध का सुन कर उचित संकेत ।
कहने लगा हे मात ! शीघ्र अपना राज्य मैं,
कर लूंगा प्राप्त कहता हूं यह बात आज मैं ॥
दे आज्ञा मुझे दुष्ट उस काष्टांगार को,
कर नष्ट शीघ्र प्राप्त करूं स्व अधिकार को ॥४०॥
करके सलाह दोनों हृदय मध्य भर स्नेह,
माता को लेगये अहो मामा के विमल ग्रेह ।
एवं वहां गोविंद राज जी से करके मंत्र,
निज राज्य के उद्धार का करने लगा वह यत्न ॥
मामा ने कहा है कुमार कार्य यह उचित,
अतएव वीर कीजे सकल सैन्य एकत्रित ॥४१॥

एक दूत काष्टांगार का तभी आया,
गोविंद राज के लिये संदेश था लाया।
महाराज सत्यंधर को था हाथी ने संहारा,
कहते हैं मगर लोग कि मैं ने उन्हें मारा॥
अतएव इस असत्य के परिशोध के लिये,
हे! भूप शीघ्र आप यहां पर पधारिये॥४२॥
निज शत्रु की समस्त कूट नीति करके ज्ञात,
वह चल दिये कुमार को ले साथ में अज्ञात।
सब सैन्य प्रबल संग लेगये अहो चतुरंग,
करने को काष्टांगार का प्रताप भंग॥
जाकर किया वहां था मित्रता का ही व्यवहार,
होने न दिया ज्ञात अपने मन का कुछ विचार॥४३॥
था काष्टांगार ने किया बहुत सत्कार,
गोविंद राज जी सहित कुछ दिन रहा कुमार।
एवं वहां कन्या का स्वयंवर था रचाया,
राजागणों को यह था समाचार सुनाया॥
जो बाण से भेदन करेगा चन्द्र यंत्र को,
वह वीर पुरुष प्राप्त करेगा कुमारि को॥४४॥

आकर सभी नरेशों ने तब बाण चलाये,
लेकिन न चन्द्र यंत्र को वह भेदने पाये।
वह सर्व धनुष धारी वीर मन ये लज्जित,
तब आया वह कुमार धनुष बाण से सज्जित॥
अपनी अखंड शक्ति से संधान धनुष को,
तत्काल ही वेधित किया उस चन्द्र यंत्र को॥४५॥
गोविंद राज जी ने नरेशों के तब समक्ष,
परिचय दिया कुमार का कहने लगा वह दक्ष।
महाराज सत्यंधर का है यह वीर वर कुमार,
सुनकर नृपति गणों को हुआ हर्ष मन अपार॥
पर काष्टांगार दुष्ट मन में जल गया,
उस के हृदय में बाण सा तत्काल लग गया॥४६॥
हो दर्प चूर्ण करने लगा मन में वह विचार,
यह वीर लेगा छीन मुझ से राज्य का अधिकार।
वह इसलिये प्रचंड सैन्य अपनी सब सजा,
लड़ने को अग्रसर हुआ रण दुंदुभि बजा॥
तब वीर वर कुमार भी ले सैन्य सकल संग,
करने लगा अत्यंत वीरता से विकट जंग॥४७॥

उस दुष्ट की सैना समस्त क्षण में नष्ट कर,
औ काष्टांगार का प्रताप नष्ट कर।
इस वीरता से उसने थी तलवार चलाई,
विकराल काल की समान मार मचाई॥
उस दुष्ट को तत्काल था धरनी पै गिराया,
कर प्राण नष्ट तात के बदले को चुकाया॥४८॥
औ प्राप्त किया राजपुरी का अखंड राज,
उत्साह से एकत्र किया सौख्य का साम्राज।
माता ने देख इस प्रकार पुत्र का प्रकर्श,
पाकर स्वराज्य मन में मनाया था अधिक हर्ष॥
नृप गण हुये एकत्र सर्व देश के अनेक,
मिलकर कुमार का किया तब राज्याभिषेक॥४९॥
निज बंधुवर्ग और इष्ट मित्र गणों को,
सत्कार से संतोष दिया सर्व जनों को।
माता का विमल प्रेम से मन था किया मुदित,
निज वंश के प्रताप सूर्य्य को किया उदित॥
हे वीर! धन्य धन्य है तुझको सहस्र बार,
ले आके पुनः जैन जाति में अहो अवतार॥५०॥

सोते हुये वीरत्व को आ फिर से जगादे,
साहस की कुमारों में विकट लाग लगादे।
कर्तव्य की दिलों में प्रबल आग लगादे,
इस नष्ट हुई जाति के फिर भाग जगादे।
कर जाएं धर्म देश का जो पूर्णतः उद्धार,
पैदा हों फिर से जाति में ऐसे अहो! कुमार ॥५१॥

# ४. कर्मवीर जम्बूकुमार

हे वीर, महावीर आपको है नमस्कार,
थे आप अतुल बल तथा दृढ़ शक्ति के अवतार !
निज बल से देवता गणों को था चकित किया,
औ रुद्र को प्रणवीरता से था थकित किया ॥
दृढ़ कर्म शत्रुओं को था वीरत्व से जीता,
है गा रहा संसार सकल आपकी गीता ॥ १ ॥
प्राचीन बालकों में पूर्ण धर्म भक्ति थी,
संसार चमत्कारिणी परिपूर्ण शक्ति थी ।
कर्तव्य के पालन में सदा रहते थे निरत,
उनका हृदय उदार था कर्मण्य थे महत ॥
लाखों विपत्तियों को थे सिर अपने उठाते,
पर दिल में आह थे नहीं किंचित् कभी लाते ॥ २ ॥

वल, तेज, पराक्रम से थे परिपूर्ण अहो वीर,
संलग्न थे उपकार में पक्के वह कर्मवीर ।
माता, पिता के नाम को करते थे हां विख्यात,
निज वंश का मुख करते थे उज्वल अहो सुखदात ॥
निज कीर्ति पताका थे विश्व मध्य उड़ाते,
आओ तुम्हें उनका चरित हैं आज सुनाते ॥ ३ ॥
सूवा विहार में थी नगरि राजगृही नाम,
राजा थे विम्बसार नीतिवान सुगुण धाम ।
करते वहीं थे सेठ–अर्हदास जी निवास,
थी उनकी प्रिया जिनमती गुण, रूप, धर्म राशि ॥
आनन्द सहित धर्म मय जीवन थे विताते,
निज कर्म के करने में समय खूब लगाते ॥ ४ ॥
सन् ईस्वी से पंच शतक पूर्व सेठ धाम,
शुभ पुत्र जन्म था हुआ जम्बू कुमार नाम ।
थे रूप में वह ठीक कामदेव के समान,
थे धर्मवंत, तेजवंत और थे वलवान ॥
विद्या, कला व नीति चतुरता से थे भरे,
थे शुद्ध चरित सोने की मानिन्द थे खरे ॥ ५ ॥
वीरों में शिरोमणि था वह जम्बू कुमार वीर,
साहस से लवालव था भरा और था प्रणवीर ।
था जोश वदन में औ थी ताकत भी हां भरपूर,

हिम्मत बहादुरी थी और था भी बड़ा शूर ॥
बे खौफ़ था दिल में नहीं मरने का सितम था,
लड़ने में युद्ध में नहीं परताप से कम था ॥ ६ ॥
भुजदंड थे कठोर ज्यों हो वज्र का यमदंड,
मुंह पर था तेज शूरता उसमें भरी अखंड ।
छाता विशाल था भरा वीरत्व से परचंड,
आंखों में चमक थी मनों बिजली के थे वह खंड ॥
निज धर्म के ऊपर था बहादुर वह दिवाना,
पहना था उसने वीर धर्म का कड़ा बाना ॥ ७ ॥
था बारह वर्ष का अभी बालक कुमार वह,
साहस, बहादुरी से था सरसार मगर वह ।
जाता था चला मग में वह बे खौफ शेर सा,
भय दिल में नहीं था, वो अचल था सुमेर सा ॥
देखा जो साम्हने को मचा खूब शोर था,
चिल्ला रहे थे लोग हाय हा का ज़ोर था ॥ ८ ॥
महाराज का पट बंध था हाथी बिगड़ पड़ा,
वह छोड़ महावत को नगर में निकल पड़ा ।
शूरों ने किया ज़ोर न वश में मगर आता,
दौड़ा फिरा चहुँ ओर था लोगों को सताता ॥
देखा कुमार ने तो बस बाँहे फड़क उठीं,
दिल में बहादुरी की थी बिजली कड़क उठी ॥९॥

हाथी से युद्ध करने को वह सामने आये,
हाथी भी बढ़ा जोश से निज सूंड उठाये।
कंधे पै दुपट्टा था पड़ा उसको मोड़कर,
हाथी की मारा सूंड पै आगे को दौड़ कर ॥
लगते ही सूंड में वो ज़ोर से था चिंघाड़ा,
आगे को बढ़ा घोर शोर करके दहाड़ा ॥१०॥
मस्तक पर तब कुमार ने दे ज़ोर से मारा,
वह रुक गया तब ख़ूब ही मुक्कों से सँहारा।
थोड़ी ही देर पहिले था मद में हुआ जो मस्त,
वह गज कुमार मार से बस हो गया था पस्त ॥
तब वीर कुमार और भी आगे को गया बढ़,
मारी छलाँग और वह मस्तक पै गया चढ़ ॥११॥
होकर सवार ख़ूब ही नगरी में फिराया,
फिर शान से कुमार नृपति सामने आया।
राजा ने किया तब कुमार का बड़ा सन्मान,
दे वस्त्र-भूषणादि बढ़ाया था ख़ूब मान ॥
आनन्द तथा मोदमय कर रक्खा उसके शीष,
एवं निहार बार बार दी मधुर आशीष ॥१२॥
हे वीर पुत्र धन्य बड़ा तूने किया काम,
विख्यात किया विश्व में माता पिता का नाम।
तू वंश उजागर है शक्ति, तेज का भंडार,

हे पुत्र चिरंजीव रहो धर्म के आगार ॥
कहने लगा कुमार भूप कह रहे क्या आप,
यह आप की कृपा का ही महाराज है प्रताप ॥१३॥
मैं ने किया कर्तव्य को अपने अहो पालन,
केवल किया प्रजा के कष्ट का है निवारन।
सम्मान युक्त वस्त्र भूषणों सहित कुमार,
हर्षित हृदय आया अहो निज ग्रेह के मझार ॥
नगरी निवासियों ने किया खूब ही सत्कार,
हे वीर! बहादुर तुझे धन धन्य है शत बार ॥१४॥
माता पिता के चरणों में जा फिर किया प्रणाम,
अति नम्रता संयुक्त हृदय भक्ति धर ललाम।
अवलोक सुगुण सिंधु वीर पुत्र को निःशंक,
मुँह चूमकर माता, पिता ने भर लिया निज अंक ॥
होकर प्रसन्न दोनों रहे प्रेम से निहार,
आनँद सहित रहने लगा वीर वर कुमार ॥१५॥
था एक समय खूब शान से भरा दरबार,
बैठे थे मंत्री गण व सभासद सभी सरदार।
सम्राट मगध देश के बैठे थे बिम्बसार,
राजा समीप बैठा था वह वीर वर कुमार ॥
इतने में एक दूत अचानक वहाँ आया,
करके प्रणाम पत्र दिया जो कि था लाया ॥१६॥

मंत्री ने पढ़ा पत्र वहाँ इस तरह तमाम,
केरलपती मृगांक का आदर सहित प्रणाम।
कन्या विलासवति जिसे थी आपने माँगी,
दे दी थी आपको हृदय अति प्रेम में पागी॥
अब उसको रत्नचूल जो राजाओं का अधीश,
लेना है चाहता सुनो तुम ध्यान दे नरईश॥१७॥
जबरन विवाहना उसे यह चाहता है नाथ,
लाखों बहादुरों की है सैना भी उसके साथ।
वह भी बड़ा बलवान है सैना सहित आकर,
है घेर लिया सारा नगर शोर मचाकर॥
कीजे सहायता सुनो भूपाल अब मेरी,
फ़ौरन ही फौज भेज दो इस में न हो देरी॥१८॥
सुन पत्र महाराज के दिल क्रोध समाया,
सेनापती को सैन्य सहित शीघ्र बुलाया।
यह हुक्म सुनाया सुनो ऐ वीर वर सभी,
जो लाए रत्नचूल को जीवित पकड़ अभी॥
वह पाएगा दरबार में भरपूर ही इनाम,
हो जायगा वीरों में बड़ा उसका सुनो नाम॥१९॥
जो शूरवीर हो कोई वह साम्हने आए,
भय हो न मरने का वही बीड़े को उठाए।
सुन करके एक दम सभी वीरों के उड़े होश,

नीचे को लगे देखने होकर सभी खामोश ॥
यह देखकर जम्बू कुमार जोश में आया,
आगे को वह तुरंत ही बीड़े को उठाया ॥२०॥
कहने लगा क्या रत्नचूल है मेरे आगे,
लाता हूँ पकड़ मैं अभी महाराज के आगे।
जाता हूँ अकेला न मुझे फौज की दरकार,
वीरों का बल है वीरता हरगिज़ नहीं तलवार ॥
हो शेर अकेला हों बहुत गीदड़ों के झुंड,
भागेंगे मोड़ मुंह को वह हुंकार सुन प्रचंड ॥२१॥
यह कहके चला दत साथ बैठ के विमान्,
जा पहुँचा रत्न चूल की फ़ौजों के निकट आन।
हो बेधड़क सैना में लगा वीर घूमने,
बन शेर सा बे खौफ लगा मद में झूमने ॥
दहलाता हुआ फौज गया रत्न चूल धाम,
मस्तक न झुकाया न किया और ही प्रणाम ॥ २२ ॥
तब रत्न चूल ने कहा गुस्से से है तू कौन,
करता नहीं अदब है खड़ा धूर्त सा तू मौन।
बोला कुमार आपने अन्याय है किया,
औ सत्य राजनीति को परित्याग है दिया ॥
जो राजनीति त्याग के अन्याय हैं करते,
उनकी न विनय हम कभी निज शीश पर धरते ॥२३॥

तब बोला रत्नचूल यूं गुस्से से होके लाल,
मैंने किया अन्याय क्या बतला मुझे ऐ बाल।
फौरन् ही तड़क करके तब कुमार ने कहा,
बतलाता हूं अन्याय आपका अभी अहा ॥
कहता हूं जो मैं उसको सुनो होके सावधान,
मनको इधर लगाके और खोल करके कान ॥२४॥
पुत्री मृगांक राय ने जो अपनी हैं निपुण,
महाराज बिम्बसार को देने का किया प्रण।
महाराज ने भी उसको है स्वीकार कर लिया,
औ उसके ब्याहने का भी संकल्प है किया ॥
राजा मृगांक आपको देना न चाहते,
जबरन हैं मगर आप उसे लेना चाहते ॥२५॥
आपका यह घोर ही अन्याय और पाप,
है क्या किया अन्याय फिर भी पूछते हैं आप ॥
सुन रत्नचूल ने कहा अन्याय क्या इसमें,
वह वस्तु है मेरी कि जो सुन्दर हो विश्वमें ॥
राजा मृगांक राय पर अधिकार है मेरा,
वह है मेरा आधीन और दास है मेरा ॥२६॥
वह कन्या रत्न है अहो मेरे ही लिये योग्य,
इसके लिये है बिम्बसार सर्वथा अयोग्य।
अतएव स्वबल शक्ति से ब्याहूंगा मैं उसे,

अन्याय है यह कहने का अधिकार है किसे ॥
सुनकर कहा कुमार ने 'क्या कहता है मतिमंद,
लाना न शब्द मुँह पर यह करले जुबान बंद ॥२७॥
महाराज बिम्बसार हैं राजाओं के अधीप,
बल शक्ति पराक्रम में हैं वह सर्व श्रेष्ठ ईश ।
तू मूढ़ है सेवक सा क्षुद्र उनके साम्हने,
दिखला रहा है शान क्या तू मेरे साम्हने ॥
कन्या विलासवति की दे तू मूढ़ आश छोड़,
प्यारी है अगर जान तो जा यहाँ से मुँह को मोड़ ॥
था रत्नचूल ध्यान से वचनों को सुन रहा,
जागा प्रचंड क्रोध यूं ललकार के कहा ।
क्या बक रहा है, मूर्ख इसे लो अभी पकड़,
सैनिक जो खड़े थे बढ़े वह सब अकड़ अकड़ ॥
चाहा कि पकड़ लें अभी जीवित कुमार को,
आगे न बढ़ सके मगर खाते ही मार को ॥ २८ ॥
ले थंभ साम्हने को बढ़ा वीर वह कुमार,
सैनिक गणों का करने लगा शीघ्र ही संहार ।
पैरों को पकड़ नभ में किसी को उछालता,
जो साम्हने आते उन्हें कर चूर डालता ॥
भरपूर वीररस से भरा उसका अंग अंग,
यह देख करके रत्नचूल रह गया बस दंग ॥ ३० ॥

क्रोधित हुआ हृदय में वह सेना की हार से,
आया स्वयं लड़ने को वह जम्बू कुमार से।
आते ही बड़े वेग से भीषण किया संग्राम,
किंचित् नहीं पीछे को हटा पर कुंवर बल धाम॥
उत्साह से कौशल सहित अपने को बचाकर,
दृढ़ शक्ति और युद्ध कला अपनी दिखाकर॥३१॥
बलवीर रत्नचूल को नीचे गिरा दिया,
फौरन् ही हाथपैर बांधकर पकड़ लिया।
राजा मृगांक के समीप ले गया कुमार,
उसने किया जंबू कुमार का बड़ा सत्कार॥
करके क्षमा फिर छोड़ दिया रत्नचूल को,
फैला दिया संसार में यश सौख्य मूल को॥ ३२॥
उत्पन्न जैन कुल में हुए वीर यों कुमार,
निज शक्ति पराक्रम का किया विश्व में संचार।
जागो! उठो! ए जैन कुमारो कमर कसो,
वीरत्व के मैदान में साहस सहित धँसो॥
आलस में पड़े मत विषय की फांस में फंसो,
कायर बने हुए न आप इस तरह हँसो॥३३॥
दिखलादो वीरता स्वधर्म डंका बजा दो,
निज कीर्ति पताका गगन में फिर से उड़ादो॥३४॥

---

ॐ
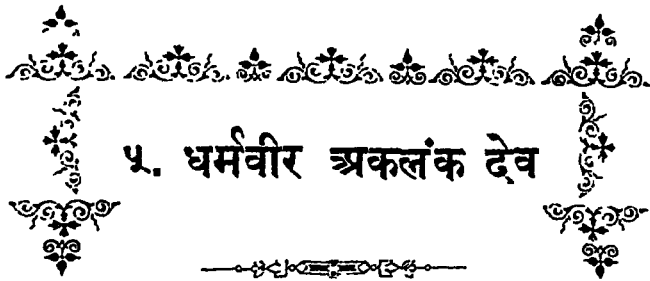
## ५. धर्मवीर अकलंक देव

जब बौद्ध धर्म का था अखिल विश्व में प्रचार,
आतंक बौद्ध भिक्षुकों का जब कि था अपार।
करते थे धर्म ओट में अनेक अनाचार,
धर्मान्ध बने सत्य का था कर रहे संहार ॥
था जैन धर्म सूर्य का तब हो चुका अवसान,
धर्मानुयायियों का नहीं था कहीं निशान ॥ १ ॥
यदि भूल से किसी ने लिया जैनधर्म नाम,
उसका वहीं समझ लो हुआ काम बस तमाम।
करने को तब संसार में जैनत्व का प्रचार,
वीरों में पुनः करने को वीरत्व का संचार ॥
करने को पुनः सत्य धर्म का अहो उद्धार,
अकलंक देव ने था लिया उस समय अवतार ॥२॥

सन् ईस्वी के अष्ट शतक मध्य में शुभ रूप,
था मान्य खेट नाम नगर विश्व में अनूप।
राजा श्री शुभतुंग जी करते थे वहां राज,
थे नीति विशारद तथा सुख शान्ति के सम्राज ॥
मंत्री प्रधान थे अहो पुरुषोत्तम मतिमान,
अर्द्धांगिनी पद्मावती विदुषी थी सुगुणखान ॥ ३ ॥
कीर्ति प्रताप बुद्धि औ विज्ञान से सम्पन्न,
रविचन्द्र सदृश पुत्र युगल थे हुए उत्पन्न।
सौंदर्य रूप राशि से लज्जित किया था काम,
प्रतिमा कलासे विश्व विदित था किया निज नाम ॥
पहिले श्री अकलंक देव दूसरे निकलंक,
थे युगकुमार शुद्ध चरित और निष्कलंक ॥ ४ ॥
दोनों कुशाग्र बुद्धि कला नीति निपुण थे,
थे सत्य धर्म भक्त औ भंडार सुगुण थे।
थे बाल्यअवस्था में ही प्रणवीर औ गंभीर,
थे शुद्ध हृदय ज्ञान निलय औ धर्म धीर ॥
साहित्य, धर्म, राजनीति, तर्क औ विज्ञान,
सिद्धान्त जैनधर्म का उनको था पूर्ण ज्ञान ॥ ५ ॥
हर्षित हृदय विनोद युक्त पुत्रयुग समेत,
मंत्री श्री पुरुषोत्तम बैठे थे सुख निकेत।
वन रक्षपाल ने सुसमाचार सुनाए,

ऋषिराज सूर्यगुप्त हैं उद्यान में आए ॥
करते ही श्रवण भक्ति में तन्मय हुए अविराम,
गृहिणी तथा युग पुत्र सहित जा किया प्रणाम ॥६॥
ऋषिराज ने पवित्र धर्म का किया उपदेश,
एवं विशाल ब्रह्मचर्य का दिया संदेश ।
बोले समस्त धर्म में प्रधान आर्यवर्य,
सुख, शान्ति का सोपान है बस एक ब्रह्मचर्य ॥
सारे गुणों की खानि है बस एक ब्रह्मचर्य,
सारे व्रतों की जान है बस एक ब्रह्मचर्य ॥७॥
दो भेद ब्रह्मचर्य के बतलाए थे सुखकोष,
पहिले गृहस्थ के लिये निज नारि में संतोष ।
एवं द्वितीय पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन,
प्राणान्त भी होते हुए निजधर्म का धारन ॥
करते हैं ब्रह्मचर्य का जो कि उचित सत्कार,
होते वही पुरुष हैं अतुल वीर्य के भंडार ॥ ८ ॥
ऋषिराज ने अत्यन्त शुभ उपदेश यह दिया,
अनुराग सहित मंत्री ने उसको श्रवण किया ।
होकर विनीत नम्रता संयुक्त यह कहा,
दो ब्रह्मचर्य मुझको अष्ट दिवस को अहा ॥
दृढ़ता समेत नाथ करूंगा उसे पालन,
जिससे विषय औ वासना का होगा निवारन ॥९॥

"प्रिय पुत्र ब्रह्मचर्य का पालन सुभग करो,
व्रत सर्व श्रेष्ठ है इसे तुम भी हृदय धरो"।
कहते हुए विनोद सहित पूर्ण प्रेम से,
ऋषि को किया पुनः प्रणाम धर्म क्षेम से ॥
आयुष्य वृद्धि गत हुए क्रमशः युगल कुमार,
यौवन का उनके तन में हुआ पूर्णतः संचार ॥१०॥
जाग्रत हुआ न किन्तु हृदय काम का विकार,
थे धर्म निरत वासना निर्मुक्त निर्विकार।
इनको युवा अवलोक हृदय मध्य सुमतिधार,
युग पुत्र के पाणिग्रहण का तब किया विचार ॥
उत्तम कुलीन योग्य सुगुण शील वय समान,
विद्या कला निपुण मनोज्ञ रूपकी निधान ॥ ११॥
कन्याएं सुन्दरी विलोक हर्ष धार मन,
दोनों कुमार का किया शुभ ब्याह आयोजन।
अवलोक पिता को विवाह कार्य्य में संलग्न,
पूछा श्री अकलंक ने हो पितृ भक्ति मग्न ॥
हे पूज्य ! है किस के लिये यह ब्याह का विधान,
है किसलिये एकत्र किया आपने सामान ॥ १२ ॥
बोले सप्रेम मिष्ट ललित शब्द पुरुष राज,
यह पुत्र तुम्हारे विवाह का है सर्व साज।
आश्चर्य सहित तब वचन कुमार ने कहा,

क्या कह रहे हैं आप पिता शब्द यह अहा ॥
हां आपने तो श्रेष्ठ श्री ऋषिराज के समक्ष,
शुभ ब्रह्मचर्य व्रत था दिया पालने को दक्ष ॥१३॥
हम ब्रह्मचारियों का कहो ब्याह है कैसा ?
देखा सुना हमने न कहीं कार्य है ऐसा।
अकलंक वीर के मनोज्ञ शब्द श्रवण कर,
बोले श्री नर श्रेष्ठ हृदय मध्य हर्ष धर ॥
केवल विनोद के लिये व्रत था दिया तुम्हें,
संकेत पालने का नहीं था किया तुम्हें ॥ १४ ॥
बोले कुमार व्रतमें क्या विनोद का संबंध,
था ब्रह्मचर्य के ही पालने का वह प्रबंध।
सच मानिये पृथ्वी में सूर्य चन्द्र और तारे,
नर, चर, अचर समूह ये साक्षी हैं हमारे ॥
दृढ़ ब्रह्मचर्य व्रत को किया हमने है धारण,
दृढ़ता समेत हम करेंगे हे पिता पालन ॥१५॥
कोई भी शक्ति है नहीं जो प्रण से हमारे,
किंचित् भी हटा दे हमें यह भाव हैं धारे।
है आर्य कुमारों का वचन वज्र की रेखा,
प्रण से उन्हें डिगाए न वह व्यक्ति ही देखा ॥
जोकर लिया प्रण है नहीं किंचित् वो टलेगा,
प्रण जाने के पहिले ही अहो प्राण चलेगा ॥१६॥

/

निश्चल मनोज्ञ शब्द श्रवण कर कुमार के,
नर श्रेष्ठ ने निश्चय किया निज मनमें धार के।
दृढ़ धुनमें मग्न देख हुआ हर्ष का संचार,
पाणिग्रहण करने का न किंचित् किया विचार ॥
एवं महा विद्वान मानवों के संगमें,
रख रंग दिया सर्वांग अहो ज्ञान रंगमें ॥१७॥
सिद्धान्त सिन्धु पूर्ण था अवगाह हो लिया,
प्राचीन दर्शनों का भी अभ्यास था किया।
निश्चित् किया था सत्य तत्व नय प्रमाण से,
तत्वार्थ का अनुभव अहो शुभ न्याय ज्ञानसे ॥
सत्यार्थ जैन धर्म का करने अहो प्रचार,
युग ब्रह्मचारियों ने किया पूर्णतः विचार ॥१८॥
धर्मार्थ स्व जीवन को हाँ करने को समर्पण,
दृढ़ता समेत बंधुओं ने मनमें किया प्रण।
था बौद्धधर्म उस समय संसार में महान,
जिन धर्म के ज्ञाता थे बहुत कम वहां विद्वान ॥
आचार्य बौद्ध धर्म के श्रुतमध्य थे निपुण,
उनके थे उपासक समस्त शिष्य भूप गण ॥१९॥
अतएव प्रथम बौद्धधर्म ग्रन्थ का पठन,
सिद्धान्त बौद्धधर्म का करने अहो मनन।
पश्चात् जैन धर्म का संदेश सुनाने,

सत्यार्थ ज्ञान ज्योति प्रभा जग में जगाने ॥
तब बौद्ध शिष्य चल दिये वह वीर युग कुमार,
आचार्य महा बौद्ध के समीप मोद धार ॥२०॥
पटने में बौद्धधर्म के आचार्य थे महान,
तब शिष्य बौद्धधर्म का करने लगे परिज्ञान।
युग बन्धुओं की बुद्धि चमत्कृत महान थी,
सिद्धान्त के अभ्यास में अतिशय निधान थी॥
अतएव अल्प काल के अभ्यास से सुगुण,
संपूर्ण बौद्ध शास्त्र में वह हो गये निपुण ॥२१॥
आचार्य एक दिन समस्त छात्र वर्ग को,
समझा रहे थे पाठ्य ग्रन्थ द्वितीय सर्ग को।
उसमें से सप्तभंग न्याय मध्य पूर्व पक्ष,
करते थे विवेचन समस्त शिष्य गण समक्ष ॥
वह पाठ था अशुद्ध अस्तु उसका शुद्ध अर्थ,
आता नहीं था उनसे हो समझा रहे थे व्यर्थ ॥२२॥
समझा सके गुरुराज विषय उस समय नहीं,
बहलाने छात्रगण को चले वह गए कहीं।
तब उस अशुद्ध पाठ को अकलंक देव ने,
सत्वर ही शुद्ध कर दिया प्रतिभा निकेत ने ॥
की सावधानी देख ही पाया न किसी ने,
यह भेद समझ पाया नहीं छात्र किसी ने ॥२३॥

देखा पुनः गुरुराज ने आकर सुपाठ वह,
अवलोक शुद्ध मन में किया तब विचार यह।
यह कार्य है किया किसी विद्वान जैन ने,
छल से यहां है पढ़ रहा निश्चय किया हमने॥
बन करके बौद्ध छात्र बौद्धधर्म का सिद्धान्त,
अध्ययन कर रहा यहां रहकर अहो नितांत॥२४॥
वह है बड़ा विद्वान् ज्ञान उसको धर्म मर्म,
जा करके यहां से करेगा नष्ट बौद्ध धर्म।
अतएव है कर्तव्य यही अब तो हमारा,
है धर्म के रक्षण का यही एक सहारा॥
करते थे शयन छात्र अर्द्ध रात्रि के समय,
विकराल शब्द तब हुआ घनघोर नादमय॥२५॥
सब चौंक पड़े छात्र विकट नाद श्रवण कर,
हा बुद्धदेव क्या हुआ कहने लगे सत्वर।
जिन भक्त युगल वीर ने भी नाद सुना कान,
अरहन्त देव का किया स्मरण अहो महान्॥
तत्काल बौद्ध गुरु ने इन्हें ज्ञात कर लिया,
एवं सशीघ्र ही नरेश को विदित किया॥ २६ ॥
राजा ने दिया हुक्म सैनिकों को इसी दम,
जा करके कैद करलो उन्हें वीर अभी तुम।
दो प्राण दंड उनको सवेरे सुनो सवान,

इस धूर्तता की पाने दो उनको सज़ा महान ॥
तत्काल ही युगवीर क़ैद करलिये गये,
एकान्त जेलखाने में वह भर दिये गए ॥ २७ ॥
इस घोर दुःख के समय विचलित न हुए वीर,
करने लगे विचार हृदय धरके अतुल धीर।
सचमुच ही सवेरे आ वधिक वध्य भूमि में,
कर देगा प्राण नष्ट है निश्चय यही मन में ॥
भरने लगे मन मध्य दिव्य भावना अहा,
तब वीर निष्कलंक ने अकलंक से कहा ॥ २८ ॥
किंचित् नहीं दुख, होगा हमारा जो प्राण नष्ट,
नश्वर है यह तो एक दिन होगा अवश्य भ्रष्ट।
यदि खेद है कुछ तो हमें बस दिल में यही एक,
इस देह से नहिं रख सके निज धर्म की हम टेक ॥
जिस धर्म के उत्थान का प्रण हमने था किया,
अफ़सोस है वह कार्य नहीं पूर्ण हा हुआ ॥२९॥
किंचित् नहीं है लालसा जीतव्य की हमें,
इच्छा न वासना है कुछ किंचित् अहो हमें।
संसार के सुख की न हमें कुछ भी चाह है,
मरने में धर्म पर न दिल में कुछ भी आह है ॥
ग़म कुछ अगर है तो यही जिस पर हैं मर रहे,
उस धर्म का हित कुछ भी नहीं हाय कर रहे ॥३०॥

सुनकर के शब्द वीरवर अकलंक ने कहा,
कि चित् न खेद कीजिये ये बन्धु मन अहा।
जो धर्म के उद्धार का प्रण हमने है किया,
होगा अवश्य मेव सफल यह समझ लिया॥
इस घोर कारागृह से निकलने का भी उपाय,
है कर लिया सचमुच ही तुम्हें देता हूं बतलाय॥२१॥
सैनिक जो पहरे पर हैं खड़े युग हमारे हेत,
मैंने स्वमंत्र बल से उन्हें कर दिया अचेत।
अतएव, बस यहाँ से शीघ्रतः चलो निकल,
किंचित् विलम्ब करने से होंगे नहीं बेकल॥
सुनकर सलाह बंधु की स्वीकार कर उसे,
सत्वर निकल पड़े अहो! युग वीर कैद से॥२२॥
कुछ ही समय पश्चात् वह सैनिक गये थे जाग,
देखा तो कैद से गये युग वीर बंधु भाग।
तत्काल कोट पाल को वृतांत सुनाया,
उसने सभी सैनिक गणों को हुक्म सुनाया॥
देखो अभी चहुं ओर उन्हें शीघ्रतः जाकर,
मिल जाएं जहाँ देना वहीं शीश उड़ा कर॥२३॥
सुन करके हुक्म सब कहीं सैनिक निकल पड़े,
यम राज सदृश उनके पकड़ने को चल पड़े।
कुछ कुछ था अंधेरा नहीं निकले थे सूर्य देव,

शीतल पवन थी वह रही करती थी विश्व सेव ॥
युग बंधु जारहे थे भाग कर स्वदेश ओर,
पीछे से उन्हें सुन पड़ा कुछ सैनिकों का शोर ॥३४॥
देखा जरा पीछे को, थे यमदूत आ रहे,
कुछ भी नहीं अरमान, जान बचने के रहे ।
तत्काल धैर्य धरके निष्कलंक ने कहा,
हे बंधु ! तू प्रतिभा निकेत वीर है महा ॥
संसार में जैनत्व को फैला सकेगा तू,
है धर्म मृतक इसमें जान ला सकेगा तू ॥३५॥
अतएव सत्य धर्म के उत्थान के लिये,
एवं समाज के विमल कल्याण के लिये !
सत्वर ही नीर धीर सरोवर में कूद कर,
पत्रों से ढक शरीर पैठ इसमें जा सुख कर ॥
संसार प्राणियों का हां करने सदा कल्याण,
हे वीर बंधु इस तरह रक्षित रखो निज प्राण ॥३६॥
मेरा न करो बन्धु तनिक भी अहो विचार,
अपना शरीर मैंने दिया धर्म ही पर वार ।
हे भ्रात ! मेरे मरने का करना तनिक न शोक,
फैलाना अखिल विश्व में सत् धर्म का आलोक ॥
है सर्व प्राणियों को मृत्यु आती है इक दिन,
अतएव मेरे मरने का मत शोक करना मन ॥३७॥

हैं श्वान मृत्यु मरते हैं मानव कुकर्म कर,
मैं तो प्रिये हां मर रहा हूँ अपने धर्म पर।
कह करके इतना वीर वह आगे को चल पड़ा,
था एक युवक उस ही सरोवर पर हां खड़ा॥
वह धो रहा था वस्त्र इसे देखा दौड़ते,
भयभीत हुआ वार वार मुंह को मोड़ते॥३८॥
पीछे से दौड़ते लखा जो इसके वह सवार,
मन में हुआ तत्काल ही भय का प्रबल संचार।
वह साथ भागने लगा भय युक्त हो झटपट,
सैनिक भी शीघ्रता से इनके आ गया निकट॥
आते ही किया एक दम सैनिक ने प्रबल वार,
धड़ से किया सर दूर, नहीं कुछ किया विचार॥३९॥
निर्दोष व्यक्तिओं को इस प्रकार मारकर,
आए अहो सैनिक हृदय में हर्ष धार कर।
राजा ने प्रातः काल बुलाया था कोट पाल,
विद्रोहिओं का उनसे सर्व पूछा अहो हाल॥
कहने लगा वह, कर दिए दोनों के प्राण नष्ट,
जो हाल हुआ था न कहा कुछ वहां स्पष्ट॥ ४० ॥
विद्वान् धर्म भक्त श्री अकलंक देव धीर,
निःशंक सरोवर से निकल करके कर्मवीर।
करने लगे ग्रामों में यंत्र तत्र वह विहार,

भरनें लगे मानव हृदय में सत्य सुधा धार ॥
उनके अकाट्य युक्ति पूर्ण कर श्रवण विचार,
हृदयों में श्रद्धा भक्ति का होने लगा संचार ॥४१॥
निर्भीक देव तुल्य शारदा का पुत्र वह,
प्रतिभा निकेत और हृदय अति पवित्र वह।
गुण ग्राहियों का पूज्य धर्मियों का मित्र वह,
विद्वान् औ भंडार सकल गुण विचित्र वह ॥
जाता था जिस स्थान में पाता था मान वह,
सत्धर्म का संदेश सुना देता ज्ञान वह ॥ ४२ ॥
शुभ वीर इस प्रकार भ्रमण कर रहा था वह,
जैनत्व का विज्ञान विमल भर रहा था वह।
कांची प्रदेश मध्य था इक रत्न संचय पुर,
निकटस्थ उसके वन में गए एक दिन ठहर ॥
उस राज्य के अधीश थें महाराज हिम शीतल,
वह बौद्ध धर्म के अहो अनुयायि थे प्रबल ॥ ४३ ॥
पटरानी मदन सुन्दरी जिन भक्त औ विद्वान,
वह अपने धर्म मध्य थी अनुरक्त सुगुण खानि।
उस राज्य के समीप ही श्री वीरवर निकलंक,
ठहरे थे उसी दिन अहो सत्धर्म में निःशंक ॥
था यह विचार होते प्रातःकाल ही सुन्दर,
जाकर करेंगे धर्म बोध रत्न संचयपुर ॥ ४४ ॥

इस मध्य हुई एक हां घटना थी उस समय,
कीजे श्रवण हे पाठको! अपना लगा हृदय।
था शुक्ला फाल्गुण की अष्टमी का दिन महान,
प्रारम्भ किया रानी ने अष्टाह्निका विधान॥
अतएव श्री जिनदेव की पूजार्थ भक्ति हर्षमय,
रथ यात्रा उत्सव किया प्रारम्भ उस समय॥४५॥
एवं जिनेन्द्रदेव को रथ में पधार कर,
जिन चैत्य को जाने का किया यत्न हर्ष धर।
था बौद्ध साधु संघ श्री नृप का राज गुरु,
जिनधर्म का द्वेषी तथा ज्ञानांध था प्रचुर॥
उसने श्री महाराज से मद युक्त कहा यह,
जिनदेव का रथ मार्ग से जो जारहा है वह॥४६॥
वह राज मार्ग से नहीं जा सक्ता है जबतक,
विद्वान जैन मुझको हरा देगा न जबतक।
गुरुदेव का अनिवार्य धर्म हुक्म श्रवण कर,
आज्ञा नरेश ने दी सारथी को ये सत्वर॥
हरगिज़ नहीं किंचित् भी रथ आगे को बढ़ाओ,
यह देता हूँ संदेश जा रानी को सुनाओ॥४७॥
रानी से उसने जाके कहा शीघ्र वह संदेश,
सुनकर हृदय में उसके हुआ दुःख का प्रवेश।
दृढ़ भक्ति सहित उसने किया यह हृदय संकल्प,

जबतक नहीं होगा हृदय का नष्ट यह विकल्प।
तब तक नहीं जल पान करूंगी ग्रहण कभी,
सर्वस्व त्यागती हूं मैं प्रण करती हूं अभी ॥४८॥
दृढ़ करके प्रतिज्ञा हुई वह ध्यान मध्य मग्न,
जिनराज के गुण गान में वह हो गई संलग्न।
चक्रेश्वरी देवी का हिला शीघ्रतः आसन,
रानी को उसने आके दिया पूर्ण आश्वासन ॥
कहने लगी रानी नहीं चिन्ता हृदय करो,
मेरा वचन मनोज्ञ ध्यान दे श्रवण करो ॥४९॥
कल प्रातः काल पूर्व दिशा से महा विद्वान,
अकलंक देव, आके करेंगे तेरा उत्थान।
होते ही प्रातः काल पूर्व ओर मन उमंग,
उत्साह युक्त वह गई रक्षक गणों के संग ॥
अकलंक देव जी ने किया वन से था प्रयाण,
वह आ रहे इस ओर थे करने को धर्म त्राण ॥५०॥
आते उन्हें अवलोक के रानी विनय सहित,
करके प्रणाम लाई नगर मध्य हर्ष युत।
एवं सकल वृतान्त सुनाया विवाद का,
राजा का हुक्म, संघश्री के संवाद का ॥
कहने लगे अकलंक जी चिन्ता न कुछ करो,
होगी विजय जिन धर्म की निश्चय हृदय धरो ॥५१॥

यह कहके गया राज्य सभा मध्य वह सत्वर,
प्रतिभानिकेत सौम्य मूर्ति धर्म का आगर।
अत्यंत प्रभा पूर्ण वीर सरल मन उदार,
अवलोक नृपति ने किया उसका उचित सत्कार॥
गज वादियों का मद विदीर्ण करने वाला वीर,
कहने लगा महाराज से यह शब्द विमल धीर॥५२॥
सत्यार्थ जैन धर्म है सुख शांति का सोपान
है वस्तुतः मनुजों के लिये मुक्ति का विधान।
इसके विषय में चाहे यदि करना कोई विवाद,
सम्मुख मेरे आये करें आकर यहाँ संवाद॥
यह करके श्रवण मंत्रश्री ज्ञान मद में चूर,
कहने लगा आकर के जोश में अहा भरपूर॥५३॥
बतलाइये ! क्या श्रेष्ठता है जैन धर्म में,
है बौद्ध धर्म सर्व श्रेष्ठ सत्य कर्म में।
शास्त्रार्थ कीजे आप यह स्वीकार है मुझे।
कीजे सुयुक्ति पूर्ण न इन्कार है मुझे,
सत्वर विवाद के लिये वह हो गए तैयार,
महाराज को मध्यस्थ रखा करने को विचार॥५४॥
दिखलाने शीघ्रतः अहो ! प्रतिभा का चमत्कार,
अद्भुत अकाट्य युक्तियों संयुक्त सुगुणधार।
सिद्धान्त स्याद्वाद के संवाद श्रवण कर,

श्री संघश्री होगया वस मौन निरुत्तर ॥
पांडित्य पूर्ण तर्क विसंवाद के द्वारा,
उसका घमंड चूर प्रबल कर दिया सारा ॥ ५५ ॥
यद्यपि वह पूर्ण रूप से था होगया परास्त,
संध्या किरण सदृश प्रभाव होगया था अस्त।
हां किन्तु सभासद समस्त पक्षपात पूर्ण,
कहने लगे हैं रह गया विवाद यह अपूर्ण ॥
कल प्रातः काल ही पुनः होने दो विवाद,
निश्चय हुआ यह स्थगित वह होगया सम्वाद ॥५६॥
मार्तंड का प्रभाव सकल होगया था अस्त,
निशि अंधकार से समस्त विश्व हुआ व्यस्त।
गर्वित हृदय संघ श्री का आज था व्यथित,
इस दिन की हार से हुआ वह पूर्णतः दुखित ॥
दिखने लगा कंपित सा बौद्ध धर्म का निशान,
प्रतिभाविलोक वीर की वह होगया हैरान ॥ ५७ ॥
आती नहीं निद्रा थी उसे आंख में किंचित्,
मन व्यग्र था चिन्ता में हुआ हाय वह ग्रसित।
आने लगे मस्तिष्क में उसके विविध विचार,
कुछ ही समय पश्चात् हुआ हर्ष का संचार ॥
उठकर सवेग करने लगा शीघ्र अनुष्ठान,
कुल देविका तारावती का श्रेष्ठतः विधान ॥ ५८ ॥

होकर स्वभक्त की विशेष भक्ति में अनुरक्त,
तत्काल ही समक्ष हुई तारादेवी व्यक्त ।
कहने लगी हे भक्त ! नहीं भग्न हृदय हो,
चिन्ता समस्त नष्ट करूंगी मैं सदय हो ॥
चल करके उसके साथ करूंगी विवाद मैं,
यह याद रखना कहती हूँ तुझसे संवाद मैं ॥ ५९ ॥
जा वाद के स्थान में घट करना स्थापन,
हो उसमें अंतरिक्ष करूंगी विवाद सुन ।
देवी की उचित उक्ति श्रवण करके संघश्री,
प्रमुदित हुआ हृदय में मनो प्राप्त विजय श्री ॥
जा राजसभा मध्य श्री अकलंक से कहा,
होगा विवाद आज पुनः आपसे अहा ॥ ६० ॥
मनमोहिनी छवि आपकी विलोक हृदय में,
आता मुझे है मोह सत्य कहता हूँ यह मैं ।
अतएव आज परदे के भीतर ही हे कुमार,
कर वाद आपकी करूंगा उक्ति का परिहार ॥
यह कहके सभा मध्य में परदे को लगाया,
एवं वहां घट मध्य में देवी को बिठाया ॥ ६१ ॥
एवं स्वयं वहां ही गया बैठ वह प्रछन्न,
करने लगी देवी भी प्रश्न हो हृदय प्रसन्न ।
कर जिसको श्रवण, हों हृदय विस्मित अहो अल्पज्ञ,

वह गूढ़ प्रश्न करती थी देवी महान विज्ञ ॥
अकलंक देव उसका शीघ्र करते थे खंडन,
एवं स्व जैन धर्म का करते रहे मंडन ॥ ६२ ॥
इस युक्ति से, इस शक्ति से, इस तर्क नीति से,
अकलंक देव देते थे उत्तर पुनीत से ।
करके श्रवण समस्त राज्य गण हुए चकित,
जयकार जैन धर्म का करते थे हो हर्षित ॥
प्रतिभा विचित्र ज्ञान विमल था प्रबल अमित,
हो जानी थी देवी त्रिलोक के हृदय विजित ॥६३॥
दृढ़ धर्म वीर धीर श्री अकलंक देव ने,
षट मास तक किया विवाद श्रुत अमेय ने ।
प्रत्यक्ष में कोई न पराजित तनिक हुआ,
अकलंक देव का हृदय विस्मित अमित हुआ ॥
करने लगा हृदय में इस प्रकार वह विचार,
आश्चर्य है जो संघश्री क्षण में गया हार ॥६४॥
तत्काल विजित कर दिया, जिसको कि था मैंने,
किंचित् न वाद में ठहर सकता था साम्हने ।
कारण है क्या ? जो आज वह षट् मास भी पर्यंत,
है प्रश्न कर रहा न हुआ आज तक है अंत ॥
संध्या को शयन के समय चिंता में हुआ मग्न,
एवं विकल हृदय हुआ विचार में संलग्न ॥६५॥

चिन्ता विमग्न रात्रि को करता था वह शयन,
किंचित् नहीं निद्रा उसे आती, था विकल मन।
तत्काल जैन धर्म रक्षिणी विवेक युक्त,
चक्रेश्वरी देवी हुई सम्मुख हो अहो व्यक्त ॥
कहने लगी हे पुत्र ! हृदय हो नहीं चिंतित,
उत्साह हो न भग्न हृदय हो नहीं किञ्चित् ॥ ९६ ॥
प्रतिभा निकेत धर्म वीर तू महा विद्वान,
आया कहां अल्पज्ञ संघ श्री में इतना ज्ञान।
क्या शक्ति थी ? उसमें जो करता आज तक विवाद,
होकर प्रसन्न कर रही देवी है अहो वाद ॥
बतलाती हूं उपाय विजित करने का उसको,
कल पूछना उससे पुनः प्रिय पूर्व प्रश्न को ॥९७॥
की उसने प्रतिज्ञा न कहूंगी मैं पूर्व वाक्य,
अतएव वह निश्चय अहो हो जायगी अवाक्य।
एवं प्रवीण, होगी विजय आप की महान,
समझा के गूढ़ भेद गई देवी स्व स्थान ॥
हर्षित हृदय निद्रा निमग्न तब हुआ वह वीर,
होगी अवश्यमेव विजय मन को बँधा धीर ॥ ९८ ॥
होते ही प्रातः काल उपस्थित सभा में हो,
नृप विज्ञ सभा सद गणों से यह कहा अहो।
मैंने विवाद था किया, अबतक विनोद वश,

फैलाने अखिल विश्व में जिनधर्म का सुयश ॥
मेरा विनोद भाव आज होगया पर्याप्त,
में शीघ्र करूंगा अहो विवाद को समाप्त ॥ ६९ ॥
गम्भीर शब्द द्वारा प्रतिज्ञा की उस समय,
करने लगी देवी भी प्रश्न पूर्ण ज्ञान मय ।
तत्काल ही अकलंक देव जी ने कहा यह,
कहिए पुनः क्या प्रश्न किया आपने था वह ॥
करके श्रवण देवी की सकल बुद्धि खो गई,
कुछ भी न कह सकी अहो वह मौन होगई ॥ ७० ॥
परदे के मध्य तब गये अकलंक जी सत्वर,
एवं सरोष पाद की तत्काल दी ठोकर ।
घट फूट गया होगया तत्काल छिन्न भिन्न,
देवी हुई विलय जो छिपी थी अहो प्रच्छन्न ॥
यह देख संघ श्री के सभी उड़ गए थे होश,
कहने लगे उससे श्री अकलंक जी सरोष ॥ ७१ ॥
रे अज्ञ ! बोल क्यों नहीं करता है अब तू वाद,
आ साम्हने कुल देवता को फिर से कर तू याद ।
करते ही श्रवण संघ श्री चरणों में गिर पड़ा,
अपने हृदय में वह अहो लज्जित हुआ बड़ा ॥
करने लगा वह प्रार्थना यह हाथ जोड़कर,
अपनी समस्त विद्या का अभिमान छोड़कर ॥ ७२ ॥

हे प्राज्ञ ! धर्म विज्ञ थी क्या मुझमें ये सामर्थ्य,
सम्मुख जो आपके अहो मैं करता शास्त्रार्थ।
छः मास तक जो वाद हुआ आपसे अव्यक्ति,
तारावती देवी की थी वह गुप्त पूर्ण शक्ति ॥
प्रतिभा, अगम्य आपकी है देव ! हे गुरुतर,
देवी को आपने जो कर दिया है निरुत्तर ॥७३॥
हे विज्ञ श्रुत निधान, आप हैं अहो अनन्य,
है विद्वता अखंड अहो धन्य देव धन्य।
कर शब्द श्रवण संघ श्री के विनय संयुक्त,
थे सर्व सभासद हुए जिन धर्म में अनुरक्त॥
एकत्र मानवों ने एक स्वर से यह कहा,
है धर्म शिरो मणि अहो जिन धर्म ही महा ॥७४॥
अत्यन्त प्रभावित हुए महाराज हिम शीतल,
जिन धर्म का विश्वास हुआ उनके मन अटल।
तत्काल ही वर्द्धित हुआ जिन धर्म का अनुराग,
जिन धर्म उपासक हुए वह बौद्ध धर्म त्याग ॥
एवं महा उत्साह युक्त पूर्ण भक्ति मय,
रथ यात्रा उत्सव किया तत्काल उस समय ॥७५॥
एवं उसे समस्त नगर मध्य घुमाया,
जयवंत जैन शासन का नाद सुनाया।
अतिशय प्रभावना हुई जिनधर्म की उस क्षन,

जिनधर्म उपासक हुए तब सर्व नगर जन ॥
परिचय दिया अकलंक ने निज बुद्धि मता का,
जिनधर्म की फहराई गगन मध्य पताका ॥ ७६ ॥
था इसके पूर्व बौद्धधर्म का प्रबल विस्तार,
था पंच शतक वर्ष से सर्वत्र ही प्रचार ।
था बौद्ध भिक्षुकों का अहो उस समय सम्राज,
था बौद्ध धर्म भक्त उस समय अखिल समाज ॥
कर वाद बौद्ध भिक्षुकों से उस समय प्रचंड,
जैनत्व को संसार में फैलाया था अखंड ॥ ७७ ॥
अकलंक देव जी ने इस प्रकार उस समय,
अपनी अखंड विद्वता दिखलाई थी अक्षय ।
श्रुतज्ञान में प्रतिभा हां विलक्षण अपूर्व थी,
अज्ञान तम हितार्थ वह समान सूर्य थी ॥
करते हैं स्मरण उन्हें अति पूज्य दृष्टि से,
विद्वान् नैयायिक सुविद्वता विशिष्ट से ॥ ७८ ॥
हे धन्य ! हे अकलंक देव ! पूज्य गुण निधान,
व्रतवीर ब्रह्मचारी रखा जैनधर्म मान ।
संसार में सत् धर्म की महिमा को बढ़ाया,
मानी मदाँधियों का पूर्ण गर्व घटाया ॥
कठिनाइयाँ, आपत्तियों का साम्हना किया,
एवं स्वधर्म तेज से जग जगमगा दिया ॥७९॥

है भावना फिर यहाँ से अकलंक वीर हों,
धर्मार्थ सर्व त्यागी हाँ निकलंक धीर हों।
हों वीर ब्रह्मचारी, विमल गुण गम्भीर हों,
विद्वान् स्वार्थ त्यागी महा कर्मवीर हों ॥
फैला अज्ञान तम है इसे फिर से हटादें,
जैनत्व के पथ पर पुनः वीरों को डटादें ॥ ८० ॥
हों न्याय, धर्म नीति निपुण औ विज्ञान पूर्ण,
वादी कुवादियों का मान करदें अहो चूर्ण ।
अज्ञान, रूढ़ियों का हां करदे पुनः संहार,
इस गिरती जैन जाति का करदें पुनः उद्धार ॥
आशा है, नहीं होगी हृदय भावना विफल,
"वत्सल" अवश्य मेव होगी कामना सफल ॥८१॥

॥ इति ॥